Azim Premji University
Bahujan Economists
School for Democracy

माया-मुक्त अर्थशास्त्र:

भारतीय अर्थव्यवस्था और संवैधानिक अधिकारों पर एक कार्यशाला

16TH-26TH AUG23

A workshop aimed to engage with some important concepts of economics along with some hands-on basic sessions on accessing, analysing, and visualising related data.

लाभुक नहीं हक़दार हैं

© 2022 Azim Premji University

This publication may be reproduced by any method without fee for teaching or nonprofit purposes. The publication shall not be used for commercial purposes. Rights are reserved under Creative Common Licence. Any derivative works shall also be protected under the same license. Rights are reserved under Creative Common Licence: Attribution + NonCommercial + Share Alike. For copying in any other circumstances, or for re-use in other publications, or for translation or adaptation, prior written permission must be obtained from the publisher.

Available from:
Azim Premji University
Survey No. 66, Burugunte Village, Bikkanahalli Main Road, Sarjapura
Bengaluru - 562125, Karnataka, India

Layout, Design & Editing: Nanditha Ajith, Yash Harichandan, Tamoghna Halder
Curation & Coordination: Tamoghna Halder, Rajendran Narayanan

Disclaimer: The analysis and/or opinions expressed in this publication are those of the author(s) and may not represent the view of the University.

Azim Premji University

Bahujan Economists

School for Democracy

आभार

इस प्रकार की कार्यशाला कई व्यक्तियों के उदार समर्थन और प्रतिबद्धता के कारण ही हो सकती है। अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के साथ इस कार्यशाला का सह-आयोजन जारी रखने के लिए बहुजन एकनॉमिस्ट्स और लोकतंत्रशाला को बहुत धन्यवाद। उन संगठनों को बहुत-बहुत धन्यवाद, जिनसे हमने संपर्क किया और उन्होंने तुरंत इस कार्यशाला में भाग लेने के लिए प्रतिभागियों को नामांकित किया। उन सभी प्रतिभागियों का विशेष आभार जिन्होंने कार्यशाला के इस दूसरे संस्करण में भाग लेने के लिए देश के विभिन्न हिस्सों से यात्रा करके अपना कीमती समय दिया। प्रतिभागियों और संसाधन व्यक्तियों के ऐसे समूह को एक साथ रखना पूरी आयोजन समिति का संयुक्त प्रयास रहा है। कार्यशाला के लिए सामग्री तैयार करने में योगदान देने वाले सभी संसाधन व्यक्तियों के प्रति हमारी हार्दिक कृतज्ञता। कार्यशाला के लिए आवश्यक लॉजिस्टिक्स को संभालने के लिए रेमा देवी को असाधारण धन्यवाद। कार्यशाला के लिए अप्रत्याशित जिम्मेदारियों की एक श्रृंखला को निभाने में धैर्यवान और शांत रहने के लिए शिवशंकर टीएस को धन्यवाद। यह एक जटिल काम था लेकिन उन्होंने इसे बेहद कुशलता से किया। कार्यशाला के दौरान आयोजन और प्रबंधन में कई अन्य लोग शामिल थे। इसके लिए चंद्र कुमार, फणीभूषण, सौरव और दोड्डुया को विशेष धन्यवाद। उनमें से प्रत्येक ने यह सुनिश्चित किया है कि कार्यशाला सुचारू रूप से चले। हम विशेष रूप से सिद्धार्थ जोशी को धन्यवाद देते हैं कि उन्होंने हमारी ओर से सभी विलंबों में हमारा साथ दिया और फिर भी अत्यधिक व्यावसायिकता और विशेषज्ञता के साथ समय पर हमे अनुवाद में मदद सुनिश्चित की। अन्य स्वयंसेवकों में से श्रवण, अमित, वरेन्या, सत्यकाम, कस्तूरी, रुचिका, सुभप्रिया और वरुण ने यह सुनिश्चित किया कि सभी कार्यशाला सत्रों के दौरान लैपटॉप पर काम करने में प्रतिभागियों को मदद मिले और अनुवाद में सहायता करने के लिए कोई मौजूद रहे। व्यस्त कार्यक्रम के बावजूद, संचार टीम ने प्रत्येक सत्र की तस्वीरें खींचना सुनिश्चित किया। इस तरह की कार्यशाला की शुरुआत का श्रेय अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के अर्जुन जयदेव और अमित बसोले जैसे अर्थशास्त्री के जोड़ी को जाता है, जिन्होंने पूरे दिल से इस पहल का समर्थन किया है। अंततः, अजीम प्रेमजी फाउंडेशन के उदार और बिना शर्त वित्तीय समर्थन के बिना कार्यशाला संभव नहीं होती। फाउंडेशन का बहुत बहुत शूकरिया।

प्रतिभागियों के नाम

ममता मीणा
संस्था महिला जन अधिकार समिति अजमेर राजस्थान
शिक्षा एवं सुरक्षा कार्यक्रम , समुदाय संपर्क, स्कूल विजिट, स्कूल नामांकन, ड्रॉपआउट ओपन शिक्षा से जुड़वाना, सरकारी योजनाओं से जुड़वाना ।

डॉ. विशाल टिकहूटे
संस्था: प्रगति क्रिएशन्स
में प्रगति क्रिएशन्स, पुणे का प्रबंध निदेशक हूँ। जो की एक एमएसएमई (MSME) है। कंपनी के रूप में एमसीए (कॉर्पोरेट मामलों के मंत्रालय) के साथ पंजीकृत है।भारत में स्वयं सहायता समूहों, गैर सरकारी संगठनों, फ्रीलांसरों और छोटे व्यवसायों के साथ काम कर रहा हूँ। सबके स्वास्थ्य, शिक्षा और आजीविका पर काम कर रहा हूँ।

रंजन कुमार, वैशाली (बिहार)
संस्था: जनविकास शक्ति संघटन, बिहार
कार्य: नरेगा, रेशन, स्वास्थ्य, और शिक्षा के कामो से जुडे है।

हिमांशी शर्मा, भोपाल मध्य प्रदेश
संस्था: आवाज संस्था (Young Shala)
कार्य: बालसुरक्षा, युवा सहयोग - सामाजिक मुद्दों पर चर्चा

पारस बंजारा, राजस्थान
संस्था: सोशल अकाउंटेबिलिटी फोरम फॉर एक्शन एंड रिसर्च (SAFAR)
मैं सोशल अकाउंटेबिलिटी फोरम फॉर एक्शन एंड रिसर्च (SAFAR) से जुड़ा हूं। SAFAR कार्यकर्ताओं, शोधकर्ताओं और विकास पेशेवरों का एक समूह है। हम सामाजिक जवाबदेही की संस्थाओं और प्रथाओं को गहरा करने और कल्याणकारी अधिकारों तक पहुंच में सुधार करने के लिए राज्य, कानून और समाज के इंटरफेस पर काम करते हैं। साथ ही घुमंतू समुदायों के अधिकारों और सांस्कृतिक पहचान पर भी काम करते है।

रोहित चौहान,
संस्था: Centre for Labour Research and Action (CLRA)
मौसमी प्रवासी श्रमिकों की कामकाजी और रहने की स्थिति का दस्तावेजीकरण करके डेटा और जानकारी उत्पन्न करना। उचित वेतन, काम करने और रहने की बेहतर सुरक्षित स्थितियों की मांगों को स्पष्ट करने के लिए श्रमिकों की क्षमताओं को बढ़ाने काम करना। यह सुनिश्चित करने के लिए कि श्रमिकों को उनके उचित अधिकार प्राप्त हों, राज्य के साथ नीतिगत वकालत करना।

अखिलेश कुमार पासवान, अररिया जिला बिहार
जन जागरण शक्ति संगठन अररिया में सस्थापित है , बिहार के कई जिले में भी ऑफिस हैं जो वहा पर रह कर लोग काम करते है मनरेगा, राशन,पैंशन,शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला हिंसा, निर्माण, नई पीढ़ी को तैयार करना, प्रवासी मजदूर एवम अन्य जो लोगों की समस्या हों उन सभी पे करते है न्याय समानता हो आधर ऐसा रचेंगे हम संसार

संगीता रोत, राजस्थान
संस्था: राजस्थान असंगठित मजदूर यूनियन
राजस्थान असंगठित मजदूर यूनियन के साथ जुड़कर काम कर रही हू।

गुरुप्रसाद
दिहाड़ी मजदूर संगठन, उत्तर प्रदेश
यह संगठन खासकर असंगठित क्षेत्र के निर्माण कार्य से जुड़े श्रमिक तथा घरेलू कामगार महिला श्रमिकों के साथ कार्यकरता है, जो ट्रेड यूनियन एक्ट के तहत रजिस्टर्ड संगठन है, दिहाड़ी मजदूर संगठन मुख्य रूप से श्रमिकों की पहचान, सम्मानजनक मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा, व मजदूरी भुगतान से जुड़े मुद्दे पर काम कर रहा है। वर्तमान में संगठन उत्तर प्रदेश के 10 जनपदों में सक्रिय रूप से कार्य कर रहा है।

सुनीता मोहनिया,
संस्था: Centre for Labour Research and Action (CLRA)
मौसमी प्रवासी श्रमिकों की कामकाजी और रहने की स्थिति का दस्तावेजीकरण करके डेटा और जानकारी उत्पन्न करना। उचित वेतन, काम करने और रहने की बेहतर सुरक्षित स्थितियों की मांगों को स्पष्ट करने के लिए श्रमिकों की क्षमताओं को बढ़ाने काम करना। यह सुनिश्चित करने के लिए कि श्रमिकों को उनके उचित अधिकार प्राप्त हों, राज्य के साथ नीतिगत वकालत करना।

साहब बख्श सिंह
दिहाड़ी मजदूर संगठन, उत्तर प्रदेश
यह संगठन खासकर असंगठित क्षेत्र के निर्माण कार्य से जुड़े श्रमिक तथा घरेलू कामगार महिला श्रमिकों के साथ कार्यकरता है, जो ट्रेड यूनियन एक्ट के तहत रजिस्टर्ड संगठन है, दिहाड़ी मजदूर संगठन मुख्य रूप से श्रमिकों की पहचान, सम्मानजनक मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा, व मजदूरी भुगतान से जुड़े मुद्दे पर काम कर रहा है। संगठन का नारा है, रोजी-रोटी और मकान अपनी हो पुख्ता पहचान। वर्तमान में संगठन उत्तर प्रदेश के 10 जनपदों में सक्रिय रूप से कार्य कर रहा है।

मेरी निशा हँसदा, गोड्डा, झाररखण्ड
संस्था: आदिवासी विकास ट्रस्ट
मैं आदिवासी विकास ट्रस्ट, गोड्डा के साथ काम कर रही हूं जो ग्राम सभा के मंच के माध्यम से मनरेगा, पीडीएस और पेंशन, पर्यावरण के मुद्दों, विस्थापन के मुद्दों, प्रवासन जैसी विभिन्न सामाजिक कल्याण योजनाओं पर उनके अधिकारों के लिए काम करता है। मैं सामाजिक सुरक्षा मंच का भी हिस्सा हूं जो सक्रिय रूप से अपने अधिकारों की वकालत (advocacy) करता है।

मनीषा दिग्गी
संस्था: लिबटेक इंडिया
में लिबटेक इंडिया के साथ काम करती हूँ, जो ग्रामीण सार्वजनिक सेवाओं के वितरण में पारदर्शिता, जवाबदेही और लोकतांत्रिक जुड़ाव के पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करती है। वर्तमान में झारखंड एक्शन रिसर्च प्रोजेक्ट में जुड़ी हूँ, जो विभिन्न सामाजिक कल्याण योजनाओं में होने वाले बहिष्करण के विभिन्न स्तरों को समझने, एंड-टू-एंड डिलीवरी मुद्दों को मैप करने और विभिन्न स्तरों के समूहों के साथ समाधान सुझाने के लिए जमीन स्तर पर काम कर रही हूँ। हम सीएसओ के साथ सामूहिक रूप से काम कर रहे है।

अबू बक्कर सिद्दीकी, पश्चिम बंगाल,
संस्था: पश्चिम बंग (बंगाल) खेत मजूर समिति
में पश्चिम बंग (बंगाल) खेत मजूर समिति (पीबीकेएमएस) जुड़ा हूँ जो दलगत (party politics) राजनीति से तटस्थ है। कृषि और ग्रामीण मजदूरों का एक स्वतंत्र पंजीकृत वर्ग आधारित ट्रेड यूनियन है। हमारा मुख्य लक्ष्य श्रमिक मजदूरों के हितों की रक्षा करना तथा जाति, धर्म, लिंग का भेद किए बिना उनके अधिकारों को महसूस कराना तथा वर्गविहीन, समतामूलक समाज का निर्माण करना है।

क्रिश्चियन खरिया, पश्चिम बंगाल
संस्था: पश्चिम बंग (बंगाल) खेत मजूर समिति
में पश्चिम बंग (बंगाल) खेत मजूर समिति (पीबीकेएमएस) जुड़ा हूँ जो दलगत (party politics) राजनीति से तटस्थ है। कृषि और ग्रामीण मजदूरों का एक स्वतंत्र पंजीकृत वर्ग आधारित ट्रेड यूनियन है। हमारा मुख्य लक्ष्य श्रमिक मजदूरों के हितों की रक्षा करना तथा जाति, धर्म, लिंग का भेद किए बिना उनके अधिकारों को महसूस कराना तथा वर्गविहीन, समतामूलक समाज का निर्माण करना है।

एलसी, केरला
संस्था: लोकतंत्र शाला
मैं केरल के एक तटीय गांव पूवर से हूं। मैं लोकतंत्र शाला नामक संगठन के लिए काम करती हूं। तटीय लोगों की समस्याओं में हस्तक्षेप करना और सूचना का अधिकार अधिनियम के संबंध में लोगों को सरकार से उनके अधिकार प्राप्त करने के लिए सशक्त बनाना ऐसे काम में करती हूँ।

नारायण कानडेयंग, पश्चिम सिंगभुम, झारखण्ड
जोहार & खाद्य सुरक्षा मंच .
जोहार = मानवाधिकार
उलंघन जैसी हिंसा से जुड़ी मामलों पर खाद्य सुरक्षा मंच = इस मंच का उद्देश्य है की हरजन तक हक अधिकारों के प्रति डिजिटल प्रशिक्षण के माध्यम से जागरूकता कार्य (राशन, पेंशन, आवास, नारेगा, जल सम्बंधित) एवं सरकारी योजनाओं पर हो रही लूट भ्रष्टाचार को हाइलाइट करना और प्रशासन से मिलकर करवाई करने का दबाव बनाना इत्यादि |

शाकरून बानो, उत्तर प्रदेश
संगतिन किसान मजदूर संगठन व समता युवा मंच में जुड़े हूं
इस संस्था में मनरेगा, राशन, पेंशन,जाति भेदभाव ,दहेज प्रथा ,शिक्षा ,रोजगार ,महिला हिंसा आदि मुद्दों पर कम करते हैं

रामचन्द्र माँझी, झारखण्ड
संस्था: खाद्य सुरक्षा जनअधिकार मंच, पश्चिम सिंगभुम, झारखण्ड
ये संस्था मनरेगा, सामाजिक सुरक्षा, पीडीएस, आंगनवाड़ी और अन्य सार्वजनिक मुद्दों पर काम करती है।

मूलचंद शर्मा, राजस्थान का निवासी हु लोकतत्रशाला से जुडा हुआ हु असंगठित क्षेत्र में आने वाले मजदुर वर्ग के साथ अलग अलग मुद्दों पर हक़ अधिकार और पैरवी का कार्य करता हु

सुरेन्द्र कुमार, उत्तर प्रदेश
मैं संगतिन किसान मजदूर संगठन जुड़े हूं
इस संस्था में मनरेगा, राशन, पेंशन,जाति भेदभाव ,दहेज प्रथा ,शिक्षा ,रोजगार ,महिला हिंसा आदि मुद्दों पर कम करते हैं

शाहीन शसा
संस्था: बेंगलुरु बस प्रयानिकारा वेदिके
बेंगलुरु बस प्रयानिकारा वेदिके के साथ स्वयंसेविका के तौर पर काम कर रही हूँ। जो की बैंगलोर में स्थित है। हम समूह, व्यक्तियों, संघों और सामुदायिक संगठनों का एक गठबंधन, mobilization को एक अधिकार के रूप में और बैंगलोर में बेहतर सार्वजनिक परिवहन प्रणालियों की वकालत करते है।

सुनिथा येसुदास, केरला
संस्था: लोकतंत्र शाला
तटीय लोगों की समस्याओं में हस्तक्षेप करना और सूचना के अधिकार अधिनियम के संबंध में लोगों को सरकार से उनके अधिकार प्राप्त करने के लिए सशक्त बनाना।

तरु सिंह, राजस्थान
संस्था: लोकतंत्र शाला और मजदूर किसान संगठन
में लोकतंत्र शाला और मजदूर किसान संगठन के साथ काम करता हूं। मजदूरों के हकों के लिए काम करता हूं। में फिल्म एवं डॉक्युमेंट्री का भी काम करता हूं।

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बहुजन एकनॉमिस्ट्स, लोकतंत्रशाला

माया-मुक्त अर्थशास्त्र

भारतीय अर्थव्यवस्था और संवैधानिक अधिकारों पर एक कार्यशाला

अर्थशास्त्र क्या है? क्या भारत के प्रतिनिधि नागरिक के लिए वार्षिक बजट मायने रखता है? प्रतिनिधि नागरिक के संवैधानिक अधिकार क्या हैं? क्या हमारी आर्थिक नीतियां हमारे संवैधानिक मूल्यों को प्रतिबिंबित करती हैं? क्या आज़ादी के बाद से भारत में आर्थिक नीतियों में कुछ बदलाव आया है? क्या हमारी आर्थिक नीतियां ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर रहे सामाजिक समूहों की जरूरतों पर ध्यान देती हैं?

दिनांक: 16 अगस्त से 26 अगस्त 2023

स्थान: अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बैंगलोर

आयोजक :

Azim Premji University

Illustration by Siddhesh Gautam

स्लाइड्स का लिंक

रिसोर्स पर्सन्स ने जो स्लाइड्स का इस्तेमाल किया, वह सभी इस गूगल ड्राइव फोल्डर में उपलब्ध हैं। ख़ास तौर से, रोज़गार के विषय में रोसा अब्रहाराम के नोट्स, संवैधानिक मूल्यों और अर्थशास्त्र के संपर्क पर गणेश और जपनीत के नोट्स, और असमानता एवं ग़रीबी पर मृणालिनी झा के नोट्स इस किताब में नहीं है। यह नोट्स केवल उपरोक्त गूगल ड्राइव फोल्डर में मौजूद हैं।

विषयसूची

प्रस्तावना
राजेंद्रन नारायणन
अर्थशास्त्र के अध्ययन पर
ज्यौं द्रेज़
अर्थशास्त्र का संक्षिप्त इतिहास
अलेक्स थॉमस
भारत में नीति निर्माण के चार महत्वपूर्ण क्षण
राहुल दे
माइक्रो : मांग, आपूर्ति और संतुलन
तेजस्विनी तभाने
असमानता और गरीबी :असमानता के सूक्ष्म और स्थूल पहलू
अदिति प्रिया और तेजस्विनी तभाने
जीडीपी और राष्ट्रीय आय लेखांकन
ज़ीको दासगुप्ता
मात्रात्मक विधियां (क्वांटिटेटिव मेथड)
तमोघ्ना हालदार
दलित बहुजन आदिवासी अधिकार
दोंथा प्रशांत
श्रम अधिकार, महिला अधिकार
सृष्टि यादव
नौकरीपेशा की पहचान
मृणालिनी झा
महंगाई (मुद्रास्फीति)
दावा शेरपा
व्यापक-आर्थिक नीति के बुनियादी विचार (मैक्रोइकॉनॉमिक पॉलिसी):
दावा शेरपा
नरेगा और श्रम बाज़ार
आनंद श्रीवास्तव

विषयसूची

नरेगा और श्रम बाज़ार
आनंद श्रीवास्तव
बजट /आर्थिक नीतियाँ और संवैधानिक मूल्य
शंकर सिंह
खरा अर्थशास्त्र क्या है
अमित बसोले

माया मुक्त अर्थशास्त्र पाठशाला 2023
सत्रों की रूपरेखा

दिवस 1 (बुधवार, 16 अगस्त)

9:00-9:45 — **सत्र 1**

स्वागत टिप्पणिया और प्रस्तावना।

9:45-10:30 — **सत्र 2**

अर्थशास्त्र क्या है? अर्थशास्त्री कौन हैं? प्रतिभागियों (PARTICIPANTS) के दृष्टिकोण से एक चर्चा। क्या अच्छा अर्थशास्त्र नाम की कोई चीज़ होती है?

चाय ब्रेक 10:30-10:45

10:45-12:30 — **सत्र 2**

सत्र 2 जारी (CONTINUED)

RESOURCE PERSON: PROF. SATISH DESHPANDE, RETIRED, DELHI UNIVERSITY

लंच ब्रेक 12:30-1:30

1:30-3:00 — **सत्र 3**

सूक्ष्मअर्थशास्त्र

मई 2023 में, महाराष्ट्र में किसान अपने द्वारा उत्पादित टमाटरों को फेंक रहे थे, क्योंकि बाजार की कीमतें उत्पादन लागत को कवर करने के लिए भी पर्याप्त नहीं थीं। दो महीने के अंदर ही टमाटर की कीमत 150 रुपये प्रति किलो से ज्यादा हो गई। अर्थशास्त्री ऐसे मूल्य में उतार-चढ़ाव कैसे समझाते हैं?

RESOURCE PERSON: TEJASWINI TABHANE,
RESEARCH ASSOCIATE,
JPAL-SOUTH ASIA

चाय ब्रेक 3:15-3:30

3:15-4:45 — **सत्र 4**

सूक्ष्मअर्थशास्त्र, (जारी)

उचित मूल्य की दुकान पर एक किलो गेहूं की कीमत 7.50 रुपये निर्धारित है। बाजार में गेहूं की कीमत पांच गुना ज्यादा हो सकती है। एक अर्थशास्त्री का इस बारे में क्या कहते है?

RESOURCE PERSON: TEJASWINI TABHANE,
RESEARCH ASSOCIATE,
JPAL-SOUTH ASIA

सब सत्र B2FG-05 में होने वाले हैं।

दिवस 2 (गुरुवार, 17 अगस्त)

9:00-10:30

सत्र 5

क्या सभी अर्थशास्त्री लोगों को तर्कसंगत व्यक्ति मानते हैं? या, क्या कुछ अर्थशास्त्री लोगों को नागरिक भी मानते हैं? ऐसे विचारों में क्या अंतर है?

अर्थशास्त्र विचार के इतिहास की प्रस्तावना

RESOURCE PERSON: ALEX THOMAS, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY

चाय ब्रेक 10:30-10:45

10:45-12:15

सत्र 6

यदि अर्थशास्त्रियों की सोच अलग-अलग है तो भारत में आर्थिक नीतियां बनाने वालों की सोच अलग-अलग क्यों है? क्या आज़ादी के बाद से भारत की आर्थिक नीतियों में कुछ बदलाव आया है? यदि हां, तो वे परिवर्तन क्या हैं और वे कैसे हुए?

भारतीय आर्थिक इतिहास का अवलोकन

RESOURCE PERSON: RAHUL DE, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY

लंच ब्रेक 12:15-1:30

1:30-3:00

सत्र 7

कुछ अर्थशास्त्रियों ने गणना की है कि 2018-19 में, भारत में एक औसत कर्मचारी ने प्रति माह ₹10,000 से कम कमाया। माध्यिका (MEDIAN) क्या है? ये अर्थशास्त्री ₹10,000 की संख्या पर कैसे पहुंचे? एक नागरिक को इन परिभाषाओं और संख्याओं की परवाह क्यों करनी चाहिए?

डेटा और सांख्यिकी का परिचय

चाय ब्रेक 3:15-3:30

10:45-12:15

सत्र 8

हाल ही में, कुछ भारतीय अर्थशास्त्रियों ने एक ग्राफ के साथ एक लेख प्रकाशित किया जहां एक्स अक्ष 0 से शुरू नहीं हुआ था और अक्ष पर इकाइयां समान रूप से दूरी पर नहीं थीं। ग्राफ क्या है? ग्राफ़ पढ़ने में सक्षम होना क्यों महत्वपूर्ण है?

डेटा विज़ुअलाइज़ेशन का परिचय

RESOURCE PERSONS: DR. GOVINDAPURAM SURESH, ASSISTANT PROFESSOR OF ECONOMICS, KREA UNIVERSITY; PABITRA CHOWDHURY, RESEARCH ANALYST, INTERNATIONAL FOOD POLICY RESEARCH INSTITUTE; AND SHRAVAN MK, RESEARCH ASSOCIATE, CENTRE FOR SUSTAINABLE EMPLOYMENT, AZIM PREMJI UNIVERSITY.

दिवस 3 (व्याख्यान + गतिविधि दिवस, शुक्रवार, 18 अगस्त)

9:00-11:00

सत्र 9

हमने माध्यिका (MEDIAN) कामगार के बारे में बात की और प्रश्न पूछा कि माध्यिका (MEDIAN) क्या है? हालाँकि, श्रमिक कौन है और भारत सरकार के अनुसार कार्य (WORK) को क्या माना जाता है? हम कैसे गणना करें कि भारत में कितने लोग काम करते हैं? क्या पुरुष और महिलाएं समान रूप से काम करते हैं?

रोजगार सांख्यिकी का परिचय

RESOURCE PERSON: ROSA ABRAHAM, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY

चाय ब्रेक 11:00-11:30

11:30-1:00

गतिविधि भाग 1

ये सब ग्रुप वर्क होगा। पहले भाग में प्रतिभागी विभिन्न प्रकार के डेटासेट से परिचित होंगे, सारांश आँकड़ों (STATISTICS) का पता लगाएँगे और ग्राफिकल अभ्यावेदन (PRESENTATION) तैयार करेंगे।

नोट: शेष सत्र गतिविधि उन्मुख होंगे (समन्वयक: पबित्रा, सुरेश, श्रवण)

लंच ब्रेक 1:00-2:00

2:00-3:30

गतिविधि भाग 2

श्रम बल भागीदारी दर, कार्यबल भागीदारी दर, बेरोजगारी दर आदि जैसे रोजगार आंकड़ों की गणना करने के लिए आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएफएस) का उपयोग।

चाय ब्रेक 3:30-3:45

3:45-4:15

गतिविधि भाग 2

गतिविधि भाग 2 जारी

दिवस 4 (शनिवार, 19 अगस्त)

9:00-10:30 — **सत्र 10 और 11**

मैक्रोइकॉनॉमिक्स: मुद्रास्फीति और बेरोजगारी

कुछ वस्तुओं की कीमतें क्यों बढ़ती रहती हैं? क्या मज़दूरी हर समय एक ही राशि से बढ़ती है? बढ़ती कीमतों पर क्या कहते हैं अर्थशास्त्री और नीति निर्माता?

चाय ब्रेक 10:30-10:45

10:45-12:15 — **सत्र 10 और 11**

RESOURCE PERSON: DAWA SHERPA, ASSISTANT PROFESSOR, DEPARTMENT OF ECONOMICS, KURSEONG COLLEGE, UNIVERSITY OF NORTH BENGAL GTA

सत्र 10 और 11 जारी रहे।

लंच ब्रेक 12:15-1:30

1:30-3:00 — **सत्र 12 और 13**

महंगाई और बेरोजगारी को देखते हुए आर्थिक नीतियों के बारे में विचार विमर्श। न्यूनतम आय गारंटी और गिग श्रमिक कानून पर राजस्थान में हाल के कानूनों का उदाहरण।

RESOURCE PERSON: SHANKAR SINGH, FOUNDER MEMBER, MAZDOOR KISAN SHAKTI SANGATHAN

चाय ब्रेक 3:00-3:15

3:15-4:45 — **सत्र 12 और 13**

सत्र 12 और 13 जारी रहे

रविवार 20 अगस्त - बेंगलुरु के दर्शनीय स्थलों की यात्रा

दिवस 5 (सोमवार, 21 अगस्त)

9:00-10:30

सत्र 14

क्या यह जानने का कोई तरीका है कि किसी गांव या तहसील में कितने प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल केंद्र हैं? या, कितने स्कूल? एक गांव में कितने लोगों को नरेगा कार्य की मजदूरी प्राप्त हुई है? क्या डेटा जिला अधिकारियों द्वारा किए गए दावों की पुष्टि करने, या सामाजिक आंदोलनों को संगठित करने में मदद कर सकता है?

लोगों के लिए डेटा

RESOURCE PERSON: NEERAJ HATEKAR, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY

चाय ब्रेक 10:30-10:45

10:45-12:30

सत्र 15

सरकार को किसी प्रकार के रोजगार की गारंटी की परवाह क्यों करनी चाहिए? क्या बाज़ार की ताकतें बेरोज़गारी से नहीं निपट सकतीं? और यदि निजी नियोक्ताओं (EMPLOYERS) को न्यूनतम वेतन स्तर प्रदान करना होगा, तो क्या वे वैसे भी अधिक लोगों को काम पर रखना बंद नहीं कर देंगे? क्या इससे बेरोजगारी नहीं बढ़ेगी?

एप्लाइड माइक्रोइकॉनॉमिक्स

RESOURCE PERSON: ANAND SHRIVASTAVA, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY

लंच ब्रेक 12:30-1:30

21 अगस्त, सोमवार, दूसरा भाग बंद (OFF) है।

दिवस 6 (आधा दिन व्याख्यान, आधा दिन गतिविधि, मंगलवार, 22 अगस्त)

9:00-10:30

सत्र 15

हम अक्सर सुनते हैं, "भारत एक ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने के लिए तैयार है"। इसका अर्थ क्या है? अर्थशास्त्री ऐसी संख्याओं की गणना कैसे करते हैं?

मैक्रोइकॉनॉमिक्स: जीडीपी और राष्ट्रीय लेखा माप

RESOURCE PERSON: ZICO DASGUPTA, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY

चाय ब्रेक 10:30-10:45

10:45-12:15

सत्र 15

सत्र 15 जारी रहा

लंच ब्रेक 12:15-1:15

1:15-3:15

गतिविधि

पिछले दिन पेश किए गए डेटासेट का उपयोग करके डेटा विश्लेषण। अलग-अलग समूह अलग-अलग डेटासेट के साथ या एक ही डेटा के साथ अलग-अलग प्रश्नों के साथ काम करते हैं।

ACTIVITY DAY MAIN COORDINATOR: JAPNEET SINGH, RESEARCH ANALYST, DEVELOPMENT DATA LAB.

चाय ब्रेक 3:00-3:15

3:30

SESSION 16

चुनावी बांड और राजनीतिक अर्थव्यवस्था पर

NITIN SETHI, SENIOR JOURNALIST & FOUNDER, REPORTERS' COLLECTIVE

(SH 1 AT 3.30 PM)

दिवस 7 (बुधवार, 23 अगस्त)

9:00-10:30

सत्र 17

क्या अर्थशास्त्रियों को इसकी परवाह है कि संविधान क्या कहता है? क्या उन्हें ऐसा करना चाहिए?

संविधान और भारतीय अर्थव्यवस्था

RESOURCE PERSON: GANESH KAMBLE, SECONDARY SCHOOL TEACHER, VIKASA VIDYA VANAM (AND JAPNEET SINGH)

चाय ब्रेक 10:30-10:45

10:45-12:15

सत्र 18

असमानता और गरीबी

कुछ अर्थशास्त्रियों का दावा है कि भारत में अमीर लोग कोविड के दौरान और अमीर हो गए हैं, जबकि कुछ का दावा कुछ और है। कुछ अर्थशास्त्रियों का कहना है, "गरीबी केवल गरीबी रेखा का एक कार्य है"। अर्थशास्त्री असमानता और गरीबी को कैसे मापते हैं? किस माप पर भरोसा करें? क्या गरीबी और असमानता केवल माप के बारे में हैं?

RESOURCE PERSON: MRINALINI JHA, FACULTY, JINDAL GLOBAL UNIVERSITY AND AMIT BASOLE, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY

लंच ब्रेक 12:15-1:30

1:30-3:00

सत्र 18

सत्र 18 जारी रहा.

चाय ब्रेक 3:00-3:15

3:30-4:30

सत्र 19

सार्वजनिक (PUBLIC) व्याख्यान

पत्रकारिता का भारत के साथ टूटा हुआ सामाजिक अनुबंध/ आज के भारत में पत्रकारिता के माध्यम से सच बताना

NITIN SETHI, SENIOR JOURNALIST & FOUNDER, REPORTERS' COLLECTIVE

दिवस 8 (गुरुवार, 24 अगस्त)

9:00-10:30

सत्र 20 और 21

क्या अर्थशास्त्री सभी प्रकार की असमानताओं की मात्रा निर्धारित कर सकते हैं? क्या उस महिला के जीवन अनुभव को मापने का कोई तरीका है जो सुबह काम करती है, शाम को पूरे परिवार के लिए खाना बनाती है और घर में हिंसा का सामना करती है? या, यदि कोई व्यक्ति आर्थिक रूप से समृद्ध हो जाता है तो क्या सामाजिक असमानताएं और जाति के आधार पर भेदभाव दूर हो जाते हैं?

एप्लाइड पॉलिटिकल इकोनॉमी

RESOURCE PERSONS: SRISHTI YADAV AND DONTHA PRASHANTH. BOTH ARE FACULTY MEMBERS AT AZIM PREMJI UNIVERSITY.

चाय ब्रेक 10:30-10:45

10:45-12:15

सत्र 20 और 21

सत्र 21 एवं 22 जारी रहे।

लंच ब्रेक 12:15-1:30

1:30-3:00

सत्र 22

भारत में पहचान कैसे आर्थिक असमानता निर्धारित करती है? ऐसे कौन से तरीके हैं जिनसे विभिन्न प्रकार के अर्थशास्त्री इसके बारे में सोचते हैं? क्या अर्थशास्त्री सामाजिक आंदोलनों और प्रतिरोध में भूमिका निभा सकते हैं? क्या सामाजिक और राजनीतिक आंदोलनों के पीछे कोई अंतर्निहित आर्थिक घटना है?

पहचान और प्रतिरोध का अर्थशास्त्र

RESOURCE PERSONS: TAMOGHNA HALDER, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY AND FIZZA SUHEL, RESEARCH ASSOCIATE, CECFEE, INDIAN STATISTICAL INSTITUTE.

चाय ब्रेक 3:00-3:15

3:30-4:30

सत्र 23

देशों को बजट की आवश्यकता क्यों होती है? इसके विभिन्न घटक क्या हैं? बजट कैसे पढ़ें? बजट के करोड़ों रुपयों में से कितना हमारे गाँवों और ब्लॉकों तक पहुँचता है?

एप्लाइड मैक्रोइकॉनॉमिक्स

RESOURCE PERSON: ZICO DASGUPTA, FACULTY, AZIM PREMJI UNIVERSITY

दिवस 9 (गतिविधि दिवस, शुक्रवार, 25 अगस्त)

इन विचारों को ध्यान में रखते हुए एक काल्पनिक देश के लिए बजट तैयार करें और/या कार्यशाला में पढ़ाए गए किसी भी विषय (THEME) पर एक EXPLAINER तैयार करें।

दिवस 10 (शनिवार, 26 अगस्त)

दिवस 10 (शनिवार, 26 अगस्त)

प्रस्तावना

राजेंद्रन नारायणन

अर्थशास्त्र हमारे द्वारा किए जाने वाले प्रत्येक लेनदेन के लिए आंतरिक है। चाहे वह लग्जरी कार खरीदने की बात हो, काम की तलाश हो, स्कूल जाना हो या गुणवत्तापूर्ण चिकित्सा उपचार प्राप्त करना हो। इनमें से प्रत्येक सरकारी नीतियों की प्रकृति पर निर्भर है क्योंकि सरकारें उत्पादन, वितरण और वस्तुओं और सेवाओं की खपत को विनियमित करने और मध्यस्थता करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत के साथ आर्थिक एजेंटों की जटिलता और बाकी दुनिया के साथ उसके संबंधों को देखते हुए यह एक नाजुक संतुलनकारी कार्य है। अर्थशास्त्रियों और राजनीति को व्यापक रूप से विभाजित करना ही संतुलन कार्य कार्य करना है। क्या हमें महंगाई की चिंता करनी चाहिए? क्या सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त बजट आवंटन है? क्या कॉरपोरेट टैक्स कम होना चाहिए? यह कुछ मुट्ठी भर प्रश्न हैं जो भारत के लिए व्यापक रूप से प्रभावी हैं जो कि जाति, वर्ग, लिंग और धर्म तथा और भी कईयों के बीच विभाजित है।

कुछ अर्थशास्त्रियों का मानना है कि सरकारों को अधिक खर्च करना चाहिए जबकि अन्य का मानना है कि सरकार की भूमिका न्यूनतम होनी चाहिए। वे विभिन्न प्रकार के डाटा आधारित साक्ष्य प्रदान करके अपने विचारों की पुष्टि करते हैं। यहां तक कि एक ही डाटा से दो वैचारिक विरोधी अर्थशास्त्री काफी भिन्न नीतिगत निर्देश प्रदान कर सकते हैं। सत्ता में सरकार के प्रमुख वैचारिक परिश्रम के आधार पर ,हमारे पास नाटकीय रूप से भिन्न नीतियां हो सकती हैं जो लाखों लोगों के जीवन और आजीविका को प्रभावित करती हैं।

लाखों लोगों को प्रभावित करने वाले आर्थिक निर्णयों की गंभीरता के बावजूद ,अधिकांश भारतीयों की नीति निर्माण में कोई भागीदारी नहीं है। नीति संबंधी दस्तावेज और इसके इर्द-गिर्द बहस ,जटिल शब्द जाल में डूबे हुए हैं जो ज्यादातर लोगों को अलग अलग कर देता है। इस प्रकार बहुसंख्यक आर्थिक नीतियों के निहितार्थों को समझने से वंचित रह जाते हैं। नतीजतन ,नागरिक- राज्य संबंध और भारत की लोकतांत्रिक रूपरेखा जटिल तरीकों से संशोधित हो जाती है।

स्वतंत्रता, समानता ,बंधुत्व गरिमा तथा अन्य मौलिक अधिकारों वाले नागरिकों के रूप में हमारे लिए सीखना, आलोचना करना और नीतियों से जुड़ना इसलिए महत्वपूर्ण हो जाता है कि कैसे ऐसी नीतियां संवैधानिक मूल्यों को आगे बढ़ा रही हैं। नीतिगत निर्णयों में निहित कुछ सिद्धांतों और तर्कों से इस उम्मीद के साथ परिचित होना न्यूनतम महत्वपूर्ण है कि हम एक अधिक जागरूक नागरिक बनें।

इन्हीं व्यापक विचारों को ध्यान में रखते हुए इस कार्यशाला का आयोजन किया जा रहा है। इस कार्यशाला के माध्यम से, प्रतिभागियों को कुछ महत्वपूर्ण अर्थशास्त्र अवधारणाओं के साथ-साथ संबंधित डेटा के विश्लेषण और प्रत्योक्षकरण पर बुनियादी सत्रों पर कुछ गतिविधियों के द्वारा अवगत कराया जाएगा। इस तरह इस प्रथम कार्यशाला के में हमारे पास xxxx राज्यों और yyyy संगठनों के प्रतिभागी हैं। इस कार्यशाला के दर्शक विभिन्न क्षेत्रों से लिए गए मध्यम या वरिष्ठ व्यवसायी हैं, जिनमें नागरिक स्वतंत्रता , श्रम पर अधिकार आधारित कार्य, दलित अधिकार, लिंग आदि पर काम करने वाले शामिल हैं, लेकिन इन्हीं तक सीमित नहीं है।

कार्यशाला के लिए विषयों की पहचान, चयन और संक्षिप्तीकरण करना आसान नहीं रहा है। समय के कारण कई महत्वपूर्ण विषयों को छोड़ना पड़ा। इसके अतिरिक्त ,कार्यशाला में शामिल विषयों तक पहुंचने के और भी कई नए और सरल तरीके हो सकते हैं। हमें उम्मीद है कि प्रतिभागी और आयोजक समान रूप से इस अनुभव का उपयोग मौजूदा सामग्री को संशोधित करने, अन्य विचारों के बारे में सोचने के नए तरीके खोजने और संवैधानिक अनिवार्यताओं को ध्यान में रखते हुए अर्थशास्त्र के आसपास चर्चा की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए अपने तरीके से जारी रखने के लिए एक स्प्रिंगबोर्ड के रूप में करेंगे।

अर्थशास्त्र के अध्ययन पर

ज्यौं द्रेज़

अर्थशास्त्र एक बहुत ही ज्ञानवर्धक विषय हो सकता है यदि इसे आलोचनात्मक दृष्टिकोण से पढ़ा जाए। दुर्भाग्य से, अर्थशास्त्र का शिक्षण हमेशा आलोचनात्मक जांच को प्रोत्साहित नहीं करता है। जिन अवधारणाओं और सिद्धांतों को सबसे अधिक संदेह के साथ प्राप्त किया जाना चाहिए, उन्हें ऐसे पढ़ाया जाता है जैसे कि वे सामान्य ज्ञान की बात हों। इस प्रक्रिया में, अर्थशास्त्र का अध्ययन हम जिस दुनिया में रहते हैं, उसकी हमारी समझ को बढ़ाने के बजाय धूमिल कर सकता हैं ।

उदाहरण के लिए उपभोक्ता की पसंद के लिए मानक आर्थिक दृष्टिकोण को लें। यह इस धारणा से शुरू होता है कि व्यक्तियों के पास वस्तुओं पर अच्छी तरह से परिभाषित और स्थिर " "प्राथमिकताएँ" है । यह शुरुआती बिंदु उन कारणों की गंभीर जांच में बाधा डालता है कि लोग चुनाव क्यों करते हैं? अगर कोई महंगी घड़ी पर या शादी पर लाखों रुपये खर्च करता है, तो इसे कोई मुद्दा नहीं माना जाता है - यह सिर्फ प्राथमिकता" की बात है। "विशिष्ट उपभोग" की घटना, जैसा कि थोरस्टीन वेब्लेन ने कहा था, विश्लेषण के दायरे से बाहर है। विज्ञापन भी आधुनिक दुनिया के सबसे बड़े और सबसे हानिकारक उद्योगों में से एक है। शब्द "विज्ञापन" 1980 के दशक की शुरुआत तक स्नातक छात्र के रूप में किसी भी अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में नहीं आया था, और मुझे संदेह है कि आज स्थिति बहुत अलग है। विज्ञापन के अर्थशास्त्र के बारे में बात किए बिना हम आधुनिक अर्थव्यवस्थाओं और कॉर्पोरेट पूंजीवाद की प्रकृति को कैसे समझ सकते हैं?

मुख्यधारा के अर्थशास्त्र की इस अस्पष्ट भूमिका के और भी उदाहरण देना आसान है। अक्सर, निश्चित रूप से, बचाव के लिए विशेष आर्थिक अनुसंधान का सहारा लिया जा सकता है (उदाहरण के लिए, उपभोक्ता प्राथमिकताएं व्यवहारिक अर्थशास्त्र में गहन जांच के दायरे में आती हैं)।

हालांकि, यह विशेष शोध पूर्वस्नातक और यहां तक कि स्नातक स्तर पर भी नियमित अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रमों में परिलक्षित नहीं होता है। एक बार फिर, यह कहना ठीक है कि मुख्यधारा का अर्थशास्त्र बेकार है - वास्तविकता से बहुत दूर है । इसका उपाय है आलोचनात्मक दृष्टिकोण से अर्थशास्त्र को पढ़ना। एक अच्छा अर्थशास्त्री होने के लिए न केवल आर्थिक विज्ञान में एक ठोस प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, बल्कि इसके आलोचकों, अन्य विषयों और वास्तविक दुनिया के साथ भी जुड़ना होता है।

मैं अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए एक वैकल्पिक, क्रिया-उन्मुख दृष्टिकोण विकसित करने के प्रयास के रूप में "अर्थशास्त्र का रहस्योद्घाटन" कार्यशाला का स्वागत करता हूं।

अर्थशास्त्र का संक्षिप्त इतिहास

अलेक्स थॉमस

इस किताब में इस्तेमाल की गई अर्थशास्त्र की परिभाषा प्रस्तुत करने से पहले, आपके सामने आर्थिक विचारों के विकास का एक संक्षिप्त ब्यौरा रखना उचित होगा। आपको क्या लगता है, एक अलग विषय/अध्ययन-क्षेत्र के रूप में अर्थशास्त्र कब उभर कर आया होगा? और, समाज को व्यवस्थित करने के एक ख़ास तरीके के तौर पर पूंजीवाद के उभार और अर्थशास्त्र के अध्ययन के एक अलग विषय के रूप में उभार के बीच में क्या आप कोई संबंध देख पाते हैं? (पूंजीवाद एक ख़ास तरह की आर्थिक व्यवस्था है जिसमें उत्पादन के सभी साधनों पर पूंजीपतियों का स्वामित्व होता है और मज़दूरों के पास अपनी मेहनत के अलावा कुछ भी नहीं)।

आर्थिक विचारों के ज़्यादातर इतिहासकार (यानी, ऐसे अर्थशास्त्री जो अपने विषय के इतिहास का अध्ययन करते हैं) मानते हैं कि विलियम पेट्टी पहले 'राजनीतिक अर्थशास्त्री' (उस समय अर्थशास्त्रियों के लिए यही शब्द चलन में था) थे। पेट्टी एक सर्जन (शल्य चिकित्सक) और सर्वेक्षक भी थे।

सन् 1662 में उन्होंने एक किताब प्रकाशित की जिसका शीर्षक था, ए ट्रीटाईज़ ऑफ़ टैक्सेज एंड कोंट्रिब्यूशंस, जिसमें समग्र उत्पाद (एग्रीगेट आउटपुट) का हिसाब लगाने का तरीका सुझाया गया और इसके कितने हिस्से पर कर लगाया जाना चाहिए, इसपर किताब में एक प्रस्ताव भी रखा गया।

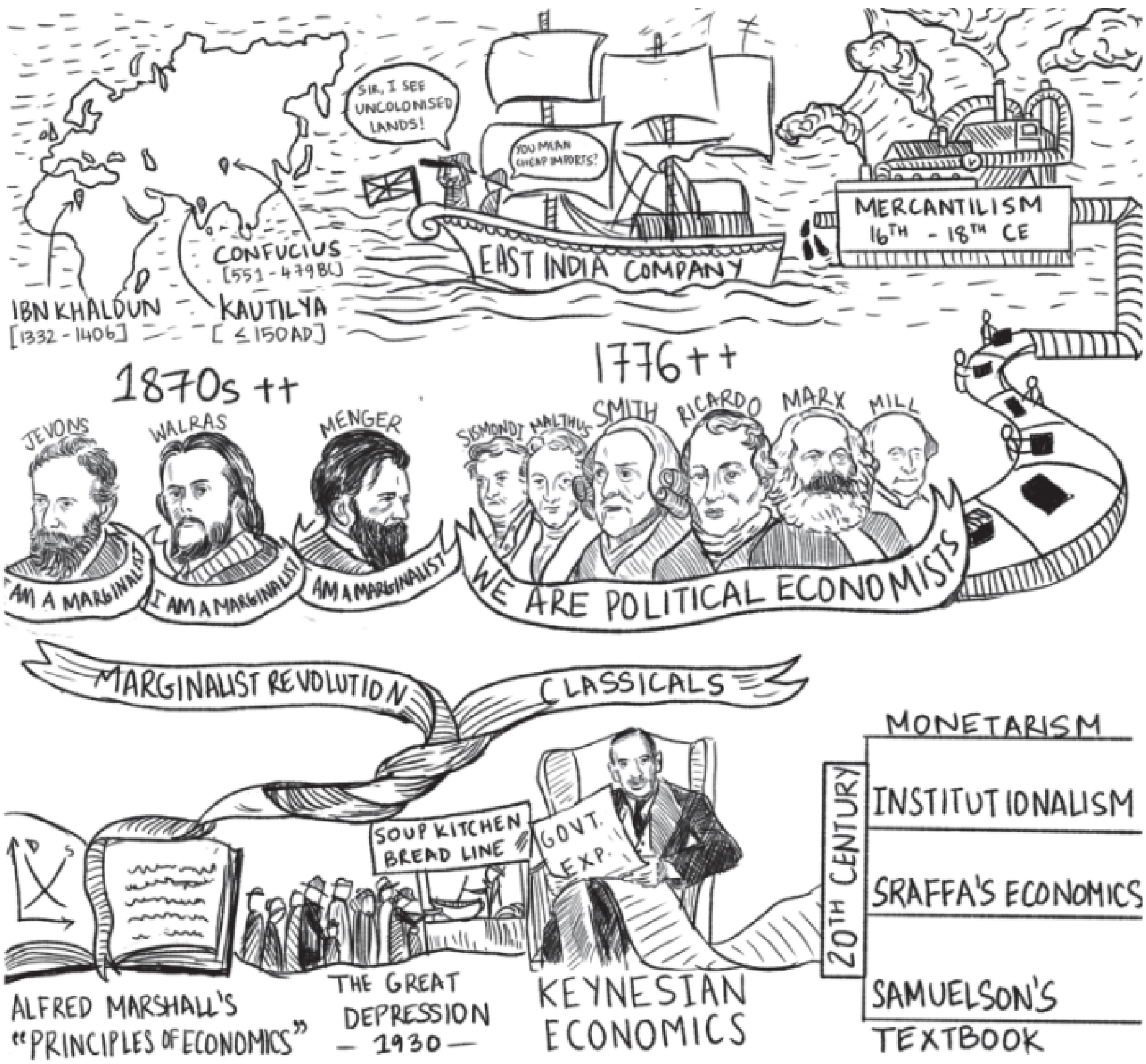

इसका मतलब हुआ कि, जैसा कि आप में से कुछ लोग सोच रहे होंगे, प्राकृतिक विज्ञान के मुकाबले अर्थशास्त्र का इतिहास बहुत ज़्यादा लंबा नहीं है (350 साल से थोड़ा ज़्यादा)। लेकिन, क्या यह सच है कि पेट्टी के पहले आर्थिक विचारों के बारे में किसी और ने कुछ भी नहीं लिखा? बिल्कुल नहीं! पेट्टी के समय से कुछ सालों के पहले और उनके समय के दौरान, व्यापारी-अर्थशास्त्रियों का एक समूह था, जिन्हें मर्कंटालिस्ट्स के नाम से जाना जाता है, जिन्होंने धन/मुद्रा, संपत्ति और विदेशी व्यापार जैसे मुद्दों पर लिखा रहे थे। इस बहुरंगी समूह में से सबसे मशहूर हुए थॉमस मून। मून के अनुसार, आयत के मुकाबले निर्यात ज़्यादा होने पर किसी देश के सोने के भंडार में होने वाली बढ़ोत्तरी ही उस देश के आर्थिक स्वास्थ्य की सूचक मानी जानी चाहिए।

लेकिन, पेट्टी और मून, दोनों ही यूरोपीय महाद्वीप से थे। क्या यूरोप के बाहर, कहीं कोई भी और आर्थिक विमर्श मौजूद नहीं था?

कुछ उल्लेखनीय गैर-यूरोपीय विमर्शों में हैं: उत्तर अफ़्रीकी अरब विचारक, इब्न खल्दून (1332-1406) की मुकद्दिमाह; 150 ईसवी से पहले कौटिल्य द्वारा लिखी गई अर्थशास्त्र; और चीन में कन्फ़्यूशियस (551-479 इसा पूर्व) के विचार। लेकिन आपको इन विमर्शों में सिद्धांतों (थ्योरी) जैसा कुछ नहीं मिलेगा। कौटिल्य शायद किसी एक व्यक्ति का नाम न होकर एक पद या शीर्षक था, और इसलिए कौटिल्य का अध्ययन करने वाले कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि अर्थशास्त्र किसी एक लेखक की किताब न होकर, एक लंबी अवधि के दौरान कई लेखकों द्वारा किया गया संकलन है।

हालांकि, एडम स्मिथ की वेल्थ ऑफ़ नेशंस (1776) में शामिल किए गए कुछ आर्थिक विचार (जैसे श्रम का विभाजन) पहले से ही उस वक़्त के आर्थिक साहित्य का हिस्सा बन चुके थे, लेकिन राजनीतिक अर्थशात्र, या संपत्ति के विज्ञान को अध्ययन के एक नए क्षेत्र के रूप में स्थापित करने का श्रेय एडम स्मिथ को ही जाना चाहिए (हालांकि यह भी ध्यान में रखें कि स्मिथ ने संपत्ति और आय के बीच फर्क किए बिना, इनका अदल-बदल कर इस्तेमाल किया है)।

इसके बाद, डेविड रिकार्डो, थॉमस तुके, रोबर्ट माल्थुस, जे.सी.एल. सिस्मौण्डी और जे.एस. मिल जैसे अर्थशास्त्रियों ने राजनीतिक अर्थशास्त्र के विज्ञान को और ज़्यादा विकसित किया। लेकिन शास्त्रीय (क्लासिकल) राजनीतिक अर्थशास्त्र (या जिसे आजकल शास्त्रीय अर्थशास्त्र कहा जाता है) की सबसे परिपक्व मीमांसा हमें कार्ल मार्क्स के लेखन में मिलती है। विशेष रूप से, इस युग में पूंजीपतियों द्वारा मज़दूरों के शोषण का पर्दा फाश करने का श्रेय मार्क्स को जाता है। हालांकि पूंजीपतियों के मुनाफे और मज़दूरों को मिलने वाली मज़दूरी के बीच के बीच के विपरीत रिश्ते (द्वन्द) पर उंगली रखते हुए रिकार्डो आमदनी के बंटवारे को लेकर पूंजीपतियों और मज़दूरों के बीच के टकराव की बात इससे पहले ही कह चुके थे (इस विचार पर इन्फ्लेशन (महंगाई/मुद्रास्फीति) वाले भाग में और गहराई से विचार किया जाएगा)। लेकिन शास्त्रीय (क्लासिकल) अर्थशास्त्रियों ने मूल्य, वितरण और आर्थिक विकास के अपने सिद्धांतों (थ्योरी) में सामाजिक अधिशेष (सरप्लस/अतिरिक्त हिस्सा/बकाया), (पारंपरिक) निर्वाह मज़दूरी (सिर्फ बुनियादी गुज़र-बसर के लिए पर्याप्त मज़दूरी) जैसी नई अवधारणों/विचारों का इस्तेमाल किया।

इसके बाद, 1870 के दशक में, आर्थिक विचारों में एक क्रांति आई, जिसकी अगुवाई अपनी अपनी जगह स्वतंत्र रूप से लिओन वालरस, विलियम स्टेनली जोन्स और कार्ल मैंजर ने की। इसे क्रांति इसलिए माना गया क्योंकि इसने शास्त्रीय अर्थशास्त्रियों द्वारा स्थापित की गई अवधारणाओं की जगह विचारों का एक नया ढांचा खड़ा किया। इसे सीमान्त (मार्जिनलिस्ट) क्रांति कहा जाता है क्योंकि इसके अंतर्गत सीमांत उपयोगिता (मार्जिनल यूटिलिटी), सीमांत उत्पाद (मार्जिनल प्रोडक्ट), सीमांत लगत (मार्जिनल कॉस्ट) और आय के वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत (प्रिंसिपल ऑफ़ मार्जिनल प्रोडक्टिविटी) जैसी अवधारणाओं और विचारों का इस्तेमाल किया गया। (आय के) वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत के अनुसार, एक स्पर्धात्मक अर्थव्यवस्था में (यानी, जिसमें पूंजी और श्रम दोनों मुक्त रूप से किसी भी उद्योग में आ-जा सके) मज़दूरों को मज़दूरी के रूप में उनके श्रम का सीमांत उत्पाद दिया जाता है और पूंजीपतियों के हिस्से पूंजी का सीमांत उत्पाद आता है। श्रम के सीमांत उत्पाद से अर्थ है एक अतिरिक्त मज़दूर जोड़े जाने पर कुल उत्पाद में होने वाला इज़ाफ़ा (और इसी तरह पूंजी के लिए भी)। ध्यान दें कि इस सिद्धांत का मतलब हुआ कि पूंजीवादी समाज में आय का वितरण मैत्रीपूर्ण तरीके से होता है, जबकि शास्त्रीय अर्थशास्त्रियों और कार्ल मार्क्स के राजनीतिक अर्थशास्त्र में साफ़ तौर पर टकराव की स्थिति पर ज़ोर दिया है, विशेष रूप से पूंजीपतियों और मज़दूरों के बीच।

अल्फ्रेड मार्शल ने, अपनी पुस्तक प्रिंसिपल्स ऑफ़ इकोनॉमिक्स (1890) में दो अलग-अलग सैद्धांतिक या वैचारिक ढांचों वाले शास्त्रीय राजनीतिक अर्थशास्त्र और सीमांत अर्थशास्त्र के बीच की निरंतरता को दर्शाने की कोशिश की। सबसे पहले, जहां सीमांत अर्थशास्त्र के लिए शुरुआती बिंदु व्यक्ति है, वहां शास्त्रीय राजनीतिक अर्थशास्त्रियों के लिए यह वर्ग/समूह है। दूसरा, शास्त्रीय राजनीतिक अर्थशास्त्र या शास्त्रीय अर्थशास्त्र में असल मज़दूरी (रियल वेज) सामाजिक और राजनीतिक ताकतों द्वारा तय की जाती है, और इसलिए इसे बदलना लगभग नामुमकिन होता है, जबकि सीमांत अर्थशास्त्र में मज़दूरी श्रम के सीमान्त उत्पाद के आधार पर निर्धारित होती है, और इसलिए इसे बदलना मुमकिन होता है। अगर आप शुरू में सीखे गए (सीमांत) अर्थशास्त्र को याद करें तो आपको ध्यान आएगा कि संतुलन की

स्थिति में दी जाने वाली मज़दूरी उस बिंदु पर तय की जाती है जहां श्रम की मांग और आपूर्ति आपस में मिलते हैं, और इन (वक्र) रेखाओं में होने वाले बदलाव इस संतुलन मज़दूरी को ऊपर या नीचे की ओर खिसका सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, शास्त्रीय अर्थशास्त्री कहेंगे कि केरल में बस चालकों की दैनिक मज़दूरी 1000 रूपए होने के पीछे मज़दूरी के लिए होने वाला मोल-भाव और सरकारी नीतियां हैं। सीमांत अर्थशास्त्री कहेंगे कि मज़दूरी के इस स्तर के पीछे बस चालकों की उत्पादकता है, और अगर इस उत्पादकता में गिरावट आती है तो यही मज़दूरी घट कर 800 रूपए भी हो सकती है। और मज़दूरी में हुई इस गिरावट को न्यायसंगत माना जाएगा। लेकिन शास्त्रीय अर्थशास्त्री कहेंगे कि क्योंकि उपभोग के स्तर को (खासतौर पर मज़दूरों के) घटाना संभव नहीं है, इसलिए मज़दूरी में होने वाली यह कटौती अन्यायपूर्ण है। तीसरा, शास्त्रीय अर्थशास्त्रियों के अनुसार, स्पर्धात्मक अर्थव्यवस्थाओं में यह सुनिश्चित करने का कोई प्राकृतिक/आंतरिक तरीका नहीं होता जिसके ज़रिए मौजूदा मज़दूरी दर पर काम करने की इच्छा रखने वाले सभी मज़दूरों को रोज़गार मिले। दूसरे शब्दों में, अर्थव्यवस्था के मज़दूरों के पूर्ण रोज़गार की ओर जाने का कोई प्रवृत्ति/रुझान नहीं होता (सिवाय, बहुत लंबी अवधि के बाद, जब मज़दूरों की मांग के हिसाब से मज़दूरों की आपूर्ति में भी बदलाव आते हैं, जो सीमांत अर्थशास्त्र के तर्क के बिलकुल विपरीत है)। इसके विपरीत, सीमांत अर्थशास्त्र का मानना है कि एक स्पर्धात्मक अर्थव्यवस्था में मज़दूरों के पूर्ण रोज़गार की स्थिति की ओर जाने की प्रवृत्ति मौजूद होती है।

1930 के दशक की महामंदी के दौरान, जॉन मेनार्ड कीन्स ने अपनी क्रांतिकारी पुस्तक दी जनरल थ्योरी ऑफ़ एम्प्लॉयमेंट, इंटरेस्ट एंड मनी (1936) प्रकाशित की, जिसमें उन्होंने तर्क दिया कि उस समय के प्रभावशाली आर्थिक विमर्श (मुख्य रूप से, मार्शल और आर्थर पीगू द्वारा दिए गए) में दर्शाई गई पूर्ण रोज़गार की प्रवृत्ति गलत है, और दबी हुई समग्र आमदनी और रोज़गार को बढ़ावा देने का एकमात्र तरीका सरकारी खर्च में विस्तार करना है।

सही नब्ज़ पकड़ते हुए, कीन्स ने बताया कि इसका कारण निजी निवेश की अस्थिरता है (क्योंकि यह मुनाफे के उद्देश्य से किया जाता है), जिसका स्तर 'अपेक्षाओं' पर निर्भर करता है जो खुद कई और आयामों पर निर्भर होती हैं, जिनका सिद्धांतीकरण करना मुश्किल है। लेकिन सरकारी खर्च इन 'अपेक्षाओं' पर निर्भर नहीं करता था (और न ही करता है)। पोलिश अर्थशास्त्री माइकल कलेकि ने भी अपने 1933 के लेख में स्वतंत्र रूप से यही तर्क दिया था।

20वीं शताब्दी में अर्थशास्त्र में पांच और महत्वपूर्ण बदलाव देखे गए: (1) मिल्टन फ्रीडमन का मुद्रावाद (मॉनेटारिस्म) जिसमें तर्क दिया गया कि 'मुद्रा-संबंधी' ताकतों का, समग्र वास्तविक उत्पाद रेलटीवीसम के अध्याय 'रेशनलसिम, रेलटीवीसम एंड और रोज़गार जैसे 'वास्तविक' आयामों पर कोई असर नहीं होता है, और इसके ज़रिए उन्होंने कीन्स के 'मुद्रा-आधारित उत्पादन अर्थव्यवस्था' के विचार को चुनौती दी; (2) थॉर्नस्टेइन वेब्लेन, जॉन केनेथ गेलब्रीयथ और गुन्नार मिर्डल द्वारा विकसित संस्थावाद जिसमें आर्थिक परिणामों में सामाजिक और संस्थागत मानकों की भूमिका पर ज़ोर दिया गया; (3) गेम थ्योरी (खेल सिद्धांत) का इस्तेमाल, विशेष रूप से देशों, कंपनियों, समूहों और व्यक्तियों के बीच के आपसी रणनीतिक लेनदेन को समझने के लिए; (4) पिएरो सराफा द्वारा की गई सीमांत अर्थशास्त्र की कड़ी आलोचना, और इसके बाद 1960 के दशक में पूंजी सिद्धांत पर हुई बहस, जिसमें आर्थिक सिद्धांत के स्तर पर पूंजी को परिभाषित करने और उसे मापने से जुड़ी समस्याओं के आधार पर वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत को चुनौती दी गई; और (5) (सीमांत) अर्थशास्त्र पढ़ाने से जुड़ी पाठ्यपुस्तकों की संस्कृति जिसका आगाज़ पॉल सैमुएलसन ने किया।

हम इस हिस्से का समापन इस आखिरी लेकिन महत्वपूर्ण बात से करेंगे। पाठ्यपुस्तकों में अक्सर अर्थशास्त्र को एक स्थिर/निश्चित विज्ञान के रूप में पेश किया जाता है, लेकिन सच्चाई इससे काफी अलग है। इस खंड में दिए गए ब्यौरे में अर्थशास्त्र में हुए वैचारिक विकास के इतिहास को एक सीधी रेखा के रूप में प्रस्तुत किया गया है, लेकिन इस ब्यौरे से यह ज़रूर स्पष्ट हो जाता है कि हालांकि हर काल और युग में कुछ आर्थिक विचारों का दबदबा रहा है लेकिन हमारे आस-पास की आर्थिक परिस्थितियों को समझने के लिए सभी अलग-अलग सिद्धांतों और विचारों का, अलग-अलग पैमाने पर, आज भी इस्तेमाल किया जा रहा है। ज़्यादार पाठ्यपुस्तकों में, विशेष रूप से आरंभिक माइक्रो और मैक्रो (व्यष्टि और समष्टि) अर्थशास्त्र की पाठ्यपुस्तकों में अर्थशास्त्र के एक स्थिर/निश्चित विषय होने का संकेत मिलता है। अब तक आप भी समझ गए होंगे कि अर्थशास्त्र में कई अलग-अलग नज़रिए और विचारधाराएं मौजूद हैं।

हमारे इस संक्षिप्त ब्यौरे में दो महत्वपूर्ण विचारधाराएं के बारे में चर्चा नहीं की गई है: पर्यावरणीय/पारिस्थितिक अर्थशास्त्र और नारीवादी अर्थशास्त्र। हम इस खंड का अंत, विज्ञान के दार्शनिक पॉल फेयरबैंड की 1999 की किताब नॉलेज, साइंस एंड

साइंटिफिक मेथड' के इस उद्धरण से करना चाहेंगे।

लेकिन "हमें क्या करना चाहिए? हमें आगे क्या कदम उठाना चाहिए? हमें कौन से नियम अपनाने चाहिए? हमें राह दिखाने के लिए कौन से मापदंड उपलब्ध हैं?" जैसे सवालों का जवाब यह कहकर दिया जाता है, "बच्चों, अब तुम बड़े हो गए हो और अब तुम्हें अपना मार्ग खुद ढूंढना होगा।" (पृ 211)

हालांकि मुख्यधारा की पाठ्यपुस्तकों में आर्थिक मुद्दों को समझने के लिए प्रभुत्वशाली (सीमांत) अर्थशास्त्र के ढांचे का इस्तेमाल किया जाता है, इस पाठ्यपुस्तक में एक दूसरा तरीका अपनाया गया है और प्रतिस्पर्धी आर्थिक सिद्धांतों को प्रस्तुत करते हुए, अर्थशास्त्र में मौजूद वैचारिक विविधता को रेखांकित करने की कोशिश की गई है। उम्मीद है कि, फेयरबैंड की तर्ज़ पर, यह तरीका अर्थशास्त्र सीखने के इस सफर में आपकी ज़्यादा मददगार साबित होगा।

भारत में नीति निर्माण के चार महत्वपूर्ण क्षण

राहुल दे

आलोचनात्मक राजनीतिक अर्थशास्त्र पर आधारित पद्धति:

किसी भी नीति के मूल्यांकन के संदर्भ में, मैं अपने छात्रों से पांच बुनियादी सवाल पूछने के लिए कहता हूँ:

1. इस नीति को क्यों लाया गया?
2. इस नीति को किन समस्याओं को सुलझाने के लिए लाया गया या मोटे तौर पर, इस समस्या की रूपरेखा को तय करने में और इस नीति के निर्माण में ऐतिहासिक परिस्थितियों की क्या भूमिका थी?
3. इस नीति के चयन में समकालीन राजनीति की क्या भूमिका थी या इस नीति की रूपरेखा तय करने में उस समय की राजनीति की और संस्थागत प्रक्रियाओं की क्या भूमिका रही?
4. इस नीति के और कौन से विकल्प मौजूद थे या इस समस्या को सुलझाने के लिए और कौन-कौन से सैद्धांतिक ढांचे (थ्योरी) उपलब्ध थे?
5. इस नीति को किस तरह से देखा गया या तथ्यात्मक आँकड़े और अनुभव हमें इस नीति के बारे में क्या बताते हैं?

इन सवालों का जवाब देने के लिए पाठकों को खुद को पीछे उस दौर में ले जाना होगा: उस समय की ऐतिहासिक चेतना का अहसास करना, नीति निर्माताओं की जगह खुद को रखते हुए उनके नज़रिए से इन निर्णयों के बारे में कल्पना कर पाना, यह सभी एक इतिहासकार के लिए ज़रूरी औज़ार हैं।

पहला क्षण: औद्योगीकरण के ज़रिए विकास: जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में पहली औद्योगिक नीति (1949)

दीऔद्योगीकरण पर आधारित विकास के मॉडल को अपनाने का निर्णय नेहरू ने नीति-निर्माताओं और शिक्षाविदों की सलाह पर लिया था। लेकिन इस लक्ष्य तक पहुंचने का जो रास्ता भारत में अपनाया गया उसके कारण हमारी विकास यात्रा बाकी विकासशील देशों से अलग रही। नेहरू की नीतियों को मध्य मार्ग के रूप में देखा गया और इन्हें लागू करने के लिए योजना की प्रक्रिया का सहारा लिया गया। इन नीतियों के तहत कृषि क्षेत्र के बजाय औद्योगिक क्षेत्र को और विदेशी पूंजी की बजाय घरेलू पूंजी को प्राथमिकता दी गई।

1948 में जारी की गई औद्योगिक नीति (जिसे फिर 1956 में अपडेट (संशोधित) किया गया) में, सभी उद्योगों को तीन श्रेणियों में बांटा गया। लोहा और इस्पात उद्योग, अन्य उद्योगों में इस्तेमाल होने वाली भारी मशीनरी, खनन और खनिज उद्योग, हवाई जहाज, रेलवे और समुद्री जहाज जैसे सत्रह बुनियादी और महत्वपूर्ण उद्योगों पर सार्वजनिक क्षेत्र को एकाधिकार दिया गया या नए निवेश का विशेषाधिकार दिया गया था। इन उद्योगों में पहले से मौजूद निजी निकायों को उद्योग में बने रहने की अनुमति थी, लेकिन किसी भी नए निकाय को उद्योग में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी।

बारह अन्य उद्योगों में, जिनमें बड़े पैमाने पर निवेश की ज़रुरत तो थी लेकिन जिनके लिए उच्च-स्तरीय प्रौद्योगिकी की ज़रुरत नहीं थी, जैसे उर्वरक, मशीन औज़ार और लौह-मिश्र धातु से जुड़े उद्योग, उनमें निजी और सार्वजनिक निवेश को बढ़ावा दिया गया, लेकिन इन उद्योगों में निवेश की अंतिम ज़िम्मेदारी सरकार को सौंपी गई। अनुसूची सी (तीसरी अनुसूची) में बाकी के सभी उद्योगों को रखा गया और इनमें निजी पूंजी के निवेश को पूरी छूट दी गई। कुछ कुटीर उद्योगों को लघु इकाइयों के लिए आरक्षित रखा गया ताकि उन्हें बड़ी इकाइयों के साथ प्रतियोगिता न करनी पड़े।

दूसरा क्षण: कृषि क्षेत्र का विकास: नई कृषि रणनीति (1969)

नई कृषि रणनीति की आधिकारिक रूप से घोषणा वर्ष 1969 में चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान की गई थी। इस रणनीति के तहत, योजनाकारों ने भारत के उस 20-25% हिस्से पर ज़ोर देने का फैसला लिया जहां सिंचाई और अन्य सार्वजनिक सेवाएं उपलब्ध थी और इसलिए कृषि विकास की संभावना ज़्यादा थी।

दूसरा, भूमि की पैदावार बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक और तकनीकी उपायों का सहारा लिया गया। यह कदम बहुत आवश्यक था क्योंकि भारत जैसे घनी आबादी वाले देश में लगभग पूरी उपजाऊ भूमि को खेती के अंतर्गत लाया जा चुका था और उत्पादन बढ़ाने के लिए कृषि क्षेत्रफल बढ़ाना संभव नहीं था। इस नई कृषि रणनीति को अक्टूबर 1965 में गहन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (IAAP) के ज़रिए देश के 114 जिलों में लागू किया गया।

IAAP की रूपरेखा 1961 में फोर्ड फाउंडेशन द्वारा देश के 14 जिलों में लागू किए गए पायलट कार्यक्रम - गहन कृषि विकास कार्यक्रम (IADP) - के आधार पर विकसित की गई थी। नई रणनीति के लिए चुने गए जिले, देश के सबसे ज़्यादा पैदावार वाले इलाकों में से थे, जिनमें पूर्व गोदावरी, तंजावुर, लुधियाना, बुर्दवान और पालघाट जैसे उपजाऊ भूमि वाले जिले शामिल थे। IAAP कार्यक्रम को शुरू करने के फैसले को 1965 में मेक्सिको और ताइवान में विकसित किए गए ज़्यादा पैदावार वाले धान और गेहूं के बीजों से भी मदद मिली। इन बीजों की पैदावार भारतीय किस्मों के मुकाबले लगभग दोगुनी थी और यह बीज भारतीय मौसम के अनुकूल भी पाए गए। लेकिन इन किस्मों के पौधों की बीमारियों से लड़ने की क्षमता बहुत कम थी, और मौसमी बदलावों या प्राकृतिक आपदाओं से इन बीजों में पैदावार का नुकसान कहीं ज़्यादा होता था।

इसलिए, इनके लिए लगातार निगरानी और तकनीकी सहयोग की ज़्यादा ज़रुरत थी। इसके चलते, पानी की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए पंप या ट्यूबवेल में, इन बीजों की पैदावार बनाए रखने के लिए उर्वरक में, पौधों को बचाने के लिए कीटनाशकों में और खेती में खर्च होने वाले समय को घटाने के लिए यंत्रों और मशीनों में निवेश करना, खेती के लिए इन बीजों का इस्तेमाल करने वाले किसानों के लिए लगभग अनिवार्य हो गया।

तीसरा क्षण: ज़मीन के लिए संघर्ष: विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईज़ेड) अधिनियम 2005

यूपीए I के कार्यकाल के दौरान किया गया सबसे महत्वपूर्ण नीति सुधार था वर्ष 2005 में लाया गया विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईज़ेड) अधिनियम (एसईज़ेड कानून)। इस कानून का उद्देश्य निर्यात-संबंधी बुनियादी ढांचे (इंफ्रास्ट्रक्चर) में निवेश को बढ़ावा देना था। इसके पीछे मान्यता यह थी कि निर्यात-आधारित उद्योग विकास की अगुवाई करेंगे और इसके ज़रिए इनसे जुड़े अन्य उद्योगों में भी रोज़गार पैदा होगा। भारत की एसईज़ेड नीति 1960 के दशक में गुजरात और महाराष्ट्र में स्थापित किए गए निर्यात प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग) क्षेत्रों पर आधारित थी। इस योजना के तहत, रत्न और आभूषण, इलेक्ट्रॉनिक उपकरण इत्यादि जैसी निर्यात वस्तुओं के व्यापार में दक्षता लाने के नज़रिए से निजी इकाइयों को बंदरगाह और औद्योगिक क्षेत्र के प्रबंधन का अधिकार सौंपा गया था। प्रोत्साहन के रूप में, इन क्षेत्रों को उस समय उद्योगों पर लागू होने वाले व्यापार और सीमा-शुल्क संबंधी नियमों से छूट दी गई, इस उम्मीद में कि इसकी मदद से भारतीय उद्योग विश्व बाजार में स्पर्धा कर पांएगे। एसईज़ेड की कल्पना के पीछे जमशेधपुर, भिलाई, बोकारो और राउरकेला औद्योगिक उपनगरों का अनुभव भी था, जहां उद्योग की ज़रूरतों के इर्द-गिर्द नगरों (टाउनशिप) की स्थापना की गई थी। इन नए शहरों में उद्योगों और उनके कर्मचारियों की ज़रुरत की सभी वस्तुएं और सेवाएं उपलब्ध कराई गई, जैसे कच्चे माल की उपलब्धता, बुनियादी ढांचे का निर्माण, स्कूल, अस्पताल और आवास। इन उपनगरों के निजी प्रबंधन के लिए विशेष प्रावधान लाए गए ताकि इन्हें निर्वाचित स्थानीय सरकारों के नियंत्रण से छूट दी जा सके। अलग आर्थिक नियमों के अंतर्गत आने वाले इस तरह के भौगोलिक क्षेत्रों की स्थापना के इस अनुभव ने भी एसईज़ेड नीति के विकास में ज़रूरी भूमिका निभाई। बुनियादी तौर पर, एसईज़ेड अधिनियम के केंद्र में निर्यात-आधारित विकास की परिकल्पना है, जिसके तहत घरेलु अर्थव्यवस्था की गाड़ी को विकास की और खींचने का दारोमदार विदेशी मांग पर होता है। इसके लिए, औद्योगिक विकास के आड़े आने वाली राजनीतिक रस्साकशी और प्रशासनिक अड़चनों से बचते हुए, कुछ सीमित क्षेत्रों में उदारवादी नीति सुधार किए जाते हैं। एसईज़ेड कानून के तहत आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना राज्य सरकारों और निजी इकाइयों द्वारा की जा सकती है, और इन क्षेत्रों पर अलग नियम लागू होते हैं।

चौथा क्षण: वर्ष 2004-13 के दौरान यूपीए सरकार द्वारा लायी गयी अधिकार-आधारित कल्याण नीतियां

यूपीए सरकार ने 'मानवीय चेहरे' के साथ आर्थिक सुधार लाने का वादा किया था, और इसके तहत अपने कार्यकाल के दौरान आर्थिक सुधारों के साथ-साथ अधिकार-आधारित सामाजिक वितरण नीतियों की शुरुआत की जिनका उद्देश्य उन लोगों की देखरेख करना था जिन तक आर्थिक सुधारों के फायदे नहीं पहुंच पा रहे थे। 1970-80 के इंदिरा गाँधी के प्रधान मंत्री कार्यकाल के दौरान गरीबी हटाने के लिए शुरू की गई योजनाओं के बाद, भारत में पहली बार इतने बड़े पैमाने पर सामाजिक नीतियों को लागू किया जा रहा था। अपने दो कार्यकालों के दौरान, यूपीए सरकार ने कई अधिकार-आधारित नीतियों की शुरुआत की, जैसे, सूचना का अधिकार अधिनियम 2005, राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम 2005, वन अधिकार अधिनियम 2006, शिक्षा का अधिकार अधिनयम 2005 और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2011। इन नीतियों की व्याख्या और मूल्यांकन करने से पहले, यह नीतियां जिन साझा सिद्धांतों पर आधारित थी उन्हें समझना बहुत ज़रूरी है।

यह सभी नीतियां अधिकार-आधारित हैं: इनके तहत लोगों को कुछ सामाजिक लाभों का हक़ दिया गया है और इन्हें उपलब्ध कराने की ज़िम्मेदारी सरकार को सौंपी गई है। यह इससे पहले की लाभ-आधारित सामाजिक नीतियों से बहुत अलग है: स्वतंत्रता के बाद की सामाजिक नीतियों, और विशेष रूप से 1972 की इंदिरा गांधी की सरकार की सामाजिक नीतियों के तहत हाशिए के सामाजिक और आर्थिक समूहों की पहचान करके, उन्हें लक्ष्य बनाकर लाभ उपलब्ध कराए जा रहे थे। इसका एक कारण सामाजिक वितरण के लिए संसाधनों का अभाव भी था - विशेष रूप से शुरुआती दशकों में औद्योगीकरण पर ज़ोर देने की वजह से। पहले की सामाजिक नीति के तहत लक्षित समूहों के रूप में सबसे गरीब और निचली आमदनी वाले समूहों की पहचान की गई - अंत्योदय राशन कार्ड-धारी परिवार - और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के ज़रिए इन समूहों को कम कीमत पर राशन और अन्य ज़रुरत की वस्तुएं उपलब्ध कराई गई। इसके अलावा, गरीब तबकों के कुछ अन्य समूहों को, जैसे महिलाओं को, विशेष रूप से स्तनपान कराने वाली महिलाओं को, बुज़ुर्गों को, विकलांगों को और वन-निवासियों को कुछ अतिरिक्त लाभ दिए गए, जैसे कम कीमत पर स्वास्थ सेवा, घर बनाने के लिए कम ब्याज़ वाले ऋण, पोषण और देखभाल सेवा, सामाजिक सुरक्षा, इत्यादि। हालांकि सिद्धांत के स्तर पर यह नीतियां अच्छी थी लेकिन भारत की प्रशासनिक प्रक्रिया की जटिलता और अकुशलता के कारण इनका ज़मीनी कार्यान्वयन काफी अप्रभावी साबित हुआ।

क्षेत्र-वार विकास दर

अवधि (आधार वर्ष 2004-05)	कृषि	उद्योग	सेवाएं (निर्माण क्षेत्र सहित)
1950-1966	1.8	6.1	4.85
1967-1980	2.6	4.58	4.1
1980-2003	3.5	5.95	6.81
2004-2013	3.3	7.2	9.4

राष्ट्रीय खातों (नेशनल एकाउंट्स) से लिए गए आंकड़े। हिसाब लेखक द्वारा किया गया है।

क्षेत्र-वार विकास दर

अवधि (आधार वर्ष 2004-05)	निजी अंतिम उपभोग व्यय	सरकारी अंतिम उपभोग व्यय	सकल स्थायी पूंजी निर्माण	निर्यात की गई वस्तुएं और सेवाएं	आयात की गई वस्तुएं और सेवाएं	बाजार मूल्यों पर सकल घरेलू उत्पाद
1950-1966	3.12	6.81	6.8	0	2.56	3.66
1967-1980	3.08	5.23	3.86	8.6	3.69	3.62
1980-2003	4.7	5.7	6.6	9.2	10	5.62
2004-2014	7.4	7.31	10.53	13.81	14.77	7.52
अवधि (आधार वर्ष 2011-12)	निजी अंतिम उपभोग व्यय	सरकारी अंतिम उपभोग व्यय	सकल स्थायी पूंजी निर्माण	निर्यात की गई वस्तुएं और सेवाएं	आयात की गई वस्तुएं और सेवाएं	बाजार मूल्यों पर सकल घरेलू उत्पाद
2014-19	7.24	7.86	7	3.6	5	4.8

राष्ट्रीय खातों (नेशनल एकाउंट्स) से लिए गए आंकड़े। हिसाब लेखक द्वारा किया गया है।

गैर-बराबरी के आंकड़े

मासिक प्रति व्यक्ति व्यय का जीनी कॉएफिशिएंट (गुणांक)		
वर्ष	शहरी	ग्रामीण
1961-62	0.357	0.313
1967-68	0.332	0.291
1968-69	0.329	0.305
1977-78	0.346	0.336
1983-84	0.34	0.31
1993-94	0.344	0.286
2004-05	0.376	0.305
2009-10	0.393	0.3

वर्ष 1961-62, 1967-68, 1968-69 and 1977-78 के आंकड़े सूर्यनारायण (2012, पृ .79) से और वर्ष 1983-84, 1993-94, 2004-05, 2009-10 के आंकड़े वाकुलाभरणं (2012) से लिए गए हैं।

माइक्रो : मांग, आपूर्ति और संतुलन

तेजस्विनी तभाने

फ़रवरी 2023 में खबरें आई कि महाराष्ट्र के नाशिक जिले में किसान प्याज़ की फसल को सड़कों पर फेंक रहे थे जबकि पड़ोसी देश पाकिस्तान में प्याज़ के दामों में 350% उछाल देखा गया था। नाशिक में किसानों को अपनी प्याज़ की फसल सिर्फ 1-2 रूपए में, और कहीं-कहीं तो लाने-लेजाने (ढुलाई) और मंडी शुल्क घटाने के बाद मुफ्त में बेचनी पड़ रही थी! जबकि पाकिस्तान में प्याज़ के दाम 250 रुपए प्रति किलो पार कर गए थे।

भारत में, अतिरिक्त आपूर्ति की वजह से प्याज़ के दामों में गिरावट देखी गई जबकि पाकिस्तान में अतिरिक्त मांग की वजह से दामों में उछाल आया।

- “अतिरिक्त आपूर्ति” और “अतिरिक्त मांग” क्या होती है?
- “मांग” का क्या मतलब है? “आपूर्ति” का क्या मतलब है?
- मांग और आपूर्ति का कीमतों से क्या संबंध है?

मांग:

दी गई कीमतों पर एक उपभोक्ता जिस मात्रा में वस्तुएं और सेवाएं खरीदने की इच्छा और क्षमता रखता है उसे उस उपभोक्ता की मांग कहा जाता है।

एक उपभोक्ता जिनका नाम प्रदन्या है, प्याज़ के लिए अलग-अलग कीमतों पर उनकी मांग इस प्रकार है:

कीमत (रुपए/किलो)	मांग (किलो)
10	18
15	15
20	12
25	10

मांग का नियम: आमतौर पर, बाकी सभी चीज़ों के ज्यों का त्यों रहने पर, कीमतों के बढ़ने पर सामान्य वस्तुओं की मांग घटती है।

आपूर्ति:

दी गई कीमतों पर एक विक्रेता जिस मात्रा में वस्तुओं और सेवाओं को बेचने की इच्छा और क्षमता रखता है, उसे उस विक्रेता की आपूर्ति कहा जाएगा।

प्याज़ का एक किसान/विक्रेता, जिनका नाम राहुल है, अलग-अलग कीमतों पर उनकी आपूर्ति इस प्रकार है:

कीमत (रुपए/किलो)	मांग (किलो)
10	7
15	10
20	12
25	15

आपूर्ति का नियम: आमतौर पर, बाकी सभी चीज़ों के ज्यों का त्यों रहने पर, कीमतों के बढ़ने पर वस्तुओं की मांग बढ़ती है।

संतुलन:

भारत में प्याज़ के दाम 1-2 रूपए प्रति किलो पर कैसे तय किए गए जबकि इसी प्याज़ का दाम पाकिस्तान में 250 रूपए प्रति किलो था? ऐसा मांग और आपूर्ति की वजह से हुआ।

मान लीजिए कि उपभोक्ता प्रदन्या प्याज़ खरीदना चाहते हैं और राहुल वो विक्रेता हैं जो प्याज़ बेचना चाहते हैं। वे दोनों किस दाम पर एक-दूसरे के साथ प्याज़ का लेन-देन करना चाहेंगे?

इस प्रक्रिया को थोड़ा आसान बनाने के लिए, मान लीजिए कि एक व्यक्ति अलग दामों की बोली लगता है, और उपभोक्ता और विक्रेता उसके द्वारा बताए गए दाम पर प्याज़ बेचने-खरीदने की कोशिश करते हैं।

बोली लगाने वाला सबसे पहले 10 रुपए प्रति किलो की बोली लगता है। इस दाम पर, प्रदन्या 18 किलो प्याज़ खरीदना चाहते हैं लेकिन राहुल सिर्फ 7 किलो ही बेचना चाहते हैं। यह देखते हुए कि प्रदन्या ज़्यादा मात्रा में प्याज़ खरीदना चाहते हैं, राहुल उन्हें ज़्यादा प्याज़ बेचना तो चाहेंगे लेकिन दामों के बढ़ने के बाद ही। राहुल 15 रुपए प्रति किलो का प्रस्ताव रखते हैं और इस दाम पर 10 किलो प्याज़ बेचना चाहते हैं लेकिन प्रदन्या इन दामों पर 15 किलो प्याज़ खरीदना चाहते हैं। राहुल फिर अपनी बोली को बढ़ाते हुए 20 रुपए प्रति किलो का प्रस्ताव रखते हैं जिस पर वो 12 किलो प्याज़ खरीदने के लिए तैयार हैं और प्रदन्या भी इस दाम पर 12 किलो प्याज़ खरीदना चाहते हैं। राहुल दामों को इससे ज़्यादा नहीं बढ़ा सकते हैं क्योंकि इससे ज़्यादा दामों पर उन्हें प्रदन्या की मांग से ज़्यादा प्याज़ बेचने होंगे।

इसलिए, प्याज़ का लेनदेन 20 रुपए प्रति किलो पर होता है और कुल 12 किलो प्याज़ बेचे-खरीदे जाते हैं। इसे संतुलन मूल्य और संतुलन मात्रा कहा जाता है, और इन्हें मांग और आपूर्ति के बीच संतुलन के आधार पर तय किया जाता है।

भारत और पाकिस्तान में प्याज़ के बाजार के लिए मांग और आपूर्ति का विश्लेषण

भारत:

इस साल के फ़रवरी के महीने में, महाराष्ट्र के तापमान में तेज़ी आने (ग्रीषम लहर की वजह से) के चलते फसल ख़राब होने के डर से किसानों ने खरीफ मौसम के अंत में में उगाए जाने वाले प्याज़ को जल्दी बेचना शुरू कर दिया और इसलिए खरीफ में और खरीफ के अंत में काटी जाने वाली फसल बाज़ार में एक ही समय पर आ गई, जिससे कुल आपूर्ति काफी बढ़ गई। इसने प्याज़ की अतिरिक्त आपूर्ति को जन्म दिया और इसलिए प्याज़ के दाम गिर गए।

पाकिस्तान:

तेज़ बारिश और बाढ़ की वजह से पाकिस्तान और अफ़ग़ानिस्तान में काफी फसलें बर्बाद हो गई, जिसमें प्याज़ की फसल भी थी, और इसके कारण बाजार में प्याज़ की आपूर्ति में काफी गिरावट आई। इसने प्याज़ की अतिरिक्त मांग को जन्म दिया और इसके चलते पाकिस्तान में प्याज़ के दामों में उछाल आया।

मांग और आपूर्ति में होने वाले बदलावों के कीमतों पर होने वाले प्रभाव:

मांग और आपूर्ति में होने वाले निम्नलिखित बदलावों के कीमतों पर होने वाले असर के बारे में सोच कर नीचे लिखें:

मांग	आपूर्ति	दाम
बढ़ोत्तरी	स्थिर (ज्यों की त्यों)	
गिरावट	स्थिर (ज्यों की त्यों)	
स्थिर (ज्यों की त्यों)	बढ़ोत्तरी	
स्थिर (ज्यों की त्यों)	गिरावट	
बढ़ोत्तरी	बढ़ोत्तरी	
बढ़ोत्तरी	गिरावट	
गिरावट	बढ़ोत्तरी	
गिरावट	गिरावट	

किसी वस्तु की मांग और उसकी कीमत और अन्य वस्तुओं की कीमतों के बीच का संबंध:

किसी वस्तु की कीमत बढ़ने पर उसकी मांग में आमतौर पर गिरावट देखी जाती है, और कीमत घटने पर उसकी मांग में बढ़ोत्तरी होती है।
लेकिन, कभी-कभी किसी वस्तु की कीमतों में उससे जुड़ी कुछ दूसरी वस्तुओं के दामों की वजह से भी बदलाव देखा जाता है।

पूरक वस्तुएं	वैकल्पिक वस्तुएं
ऐसी वस्तुएं जिन्हें आमतौर पर साथ में इस्तेमाल किया या खरीदा जाता है	ऐसी वस्तुएं जिनका आपस में नज़दीकी संबंध होता है और इनमें से एक के बदले दूसरी वस्तु को इस्तेमाल किया जा सकता है
किसी वस्तु के पूरक सामान की कीमत में गिरावट आने पर उस वस्तु की मांग में बढ़ोत्तरी देखी जाती है।	किसी वस्तु के एवज़ में इस्तेमाल की जा सकने वाले सामान की कीमत के घटने पर उस वस्तु की मांग में गिरावट आती है।
उदाहरण: पेट्रोल और वाहन	उदाहरण: पेट्रोल और सीएनजी

पूरक और वैकल्पिक वस्तुओं के कुछ और उदाहरणों की सूची बनाएं।

कीमतों में उतार-चढाव:

भारत में जनवरी 2021-नवंबर 2022 के बीच गेहूं का खुदरा मूल्य (स्रोत) और जनवरी 2017-दिसंबर 2019 के बीच प्याज़ का खुदरा मूल्य (स्रोत)

	गेहूं		प्याज़		
महीना	2021	2022	2017	2018	2019
जनवरी	28.68	28	14.84	42.69	18.03
फ़रवरी	27.95	28.4	14.61	35.12	16.48
मार्च	27.9	28.67	14.52	26.18	15.87
अप्रैल	27.05	28.93	14.36	19.28	16.25
मई	26.2	29.35	14.07	16.72	16.96
जून	26.4	29.72	14.56	17.78	19.04
जुलाई	26.64	29.88	15.04	21.02	21.11
अगस्त	26.56	30.56	26.02	21.60	24.82
सितंबर	26.75	30.84	26.58	20.60	38.30
अक्टूबर	27.28	30.83	30.11	21.41	47.02
नवंबर	27.98	31.38	39.07	22.02	61.08
दिसंबर	27.97		43.44	19.36	82.17*

चर्चा करें:

1. **कुछ वस्तुओं के दामों में इतना ज़्यादा उतार-चढ़ाव क्यों आता है (जैसे, प्याज़) जबकि कुछ वस्तुओं के दाम काफी स्थिर रहते हैं (जैसे, गेंहू)?**
2. **कीमतों में स्थिरता ज़्यादा अच्छी है या उतार-चढ़ाव?**
   a. **ज़रूरी सामान बनाम गैर-ज़रूरी सामान**
3. **क्या कीमतों को स्थिर बनाने में सरकार कोई भूमिका निभा सकती है?**

कीमतों को स्थिर करने में सरकार की भूमिका:

1. कीमतों की ऊपरी (अधिकतम) और निचली (न्यूनतम) सीमा: सरकार किसी वस्तु की कीमतों को नियंत्रित करना चाहे तो उस वस्तु का न्यूनतम मूल्य (निचली सीमा) तय कर सकती है जिसके नीची उस वस्तु की कीमत नहीं गिर सकती है या अधिकतम मूल्य (ऊपरी सीमा) निर्धारित कर सकती है जिसके ऊपर उस वस्तु के दाम नहीं जा सकते हैं।
2. न्यूनतम समर्थन मूल्य: सरकार एक दाम तय करती है जिस पर उस वस्तु को वो विक्रेताओं से खरीदने के लिए तैयार रहती है, और इसके कारण बाजार में उस वस्तु के दाम इस न्यूनतम समर्थन मूल्य से नीचे नहीं गिरते हैं।
3. सुरक्षा भंडार (बफर स्टॉक): सरकार सुरक्षा की दृष्टि से कुछ वस्तुओं का भंडार रखती है और इन वस्तुओं की कीमतों पर काबू पाने के लिए समय-समय पर हस्तक्षेप करती है।
4. आयात और निर्यात नियंत्रण: सरकार घरेलू बाज़ार में किसी वस्तु की आपूर्ति बनाए रखने और इसके ज़रिए उसकी कीमतों पर काबू पाने के लिए उस वस्तु के आयात और निर्यात को नियंत्रित करती है।

नीति और कीमतें

अभी तक हमने सीखा:

1. कीमतें बाजार में मांग और आपूर्ति द्वारा निर्धारित की जाती हैं और इसलिए इनमें उतार-चढ़ाव आता रहता है।
2. कीमतों को स्थिर करने में सरकार सक्रिय भूमिका निभा सकती है।

बड़ा सवाल: क्या सरकार का कीमतों पर काबू पाने के लिए बाजार में हस्तक्षेप करना ठीक है?

मान लें कि आपका नाम आनंद है और आप गेहूं उगाने वाले एक छोटे किसान हैं और आपके पास *5* क्विंटल गेहूं हैं। आप कुछ आमदनी के लिए इस गेहूं को बेचना चाहते हैं। आपके आस-पास गेंहू के कई बड़े और छोटे किसान हैं। अमेया बानी नाम के एक आटा विक्रेता हैं जो स्थनीय किसानों से गेहूं ख़रीद कर उसे पीस कर आटे के रूप में बेचना चाहते हैं। वो आपसे *5* रुपए प्रति किलो की दर से गेहूं खरीदने का प्रस्ताव रखते हैं, लेकिन गेहूं पैदा करने की आपकी लगत *4* रुपए प्रति किलो थी। अमिया बानी को गेहूं बेचने की आपकी बहुत ज़्यादा इच्छा नहीं है क्योंकि इसमें आपका बहुत ज़्यादा फायदा नहीं है। लेकिन आपको इससे ज़्यादा दाम देने वाला भी कोई और खरीददार नहीं है। इसके अलावा, अमेया बानी जैसे खरीददार जानते हैं कि क्योंकि वे बड़े खरीददार हैं तो अगर आप उन्हें गेहूं नहीं बेचते हैं तो वे बहुत आसानी से किसी और किसान से गेहूं खरीद सकते हैं।

इस स्थिति में आप क्या करेंगे?
अगर आपकी उत्पादन लागत असल में *5* रुपए प्रति किलो होती या *6* रुपए प्रति किलो होती, तो?

मान लीजिए कि आप अपने गेहूं बेचने का फैसला करते हैं। अब अमेया बानी और उनके दोस्त *100* क्विंटल गेहूं खरीद कर *100* क्विंटल आटे का उत्पादन करते हैं। बाज़ार में आटे का मूल्य *10* रुपए प्रति किलो है। इन आटा विक्रेताओं ने *5* रुपए प्रति किलो की दर पर गेहूं खरीदे और गेहूं पीसने की लागत *2* रुपए प्रति किलो है। इसके कारण अमेया बानी और उसके दोस्तों को *3* रुपए प्रति किलो का मुनाफा मिलता है। लेकिन इन दोस्तों को रातों-रात अरबपति बनना है और इसलिए वे दुखी हो जाते हैं कि वे ज़्यादा पैसा नहीं बना पा रहे हैं। लेकिन अमेया बानी ने अर्थशास्त्र पढ़ा है*!* उसके दिमाग में एक योजना आती है। वे बाजार में सिर्फ *50* क्विंटल आटा लाते हैं और बाकी का आटा अंट-हिल-आ में स्थित अपने बड़े से कारखाने में जमा करके रख लेते हैं।

अब बाजार में आटे की कीमतों का क्या होगा?

आटे के दाम बढ़ने के बाद, अमेया बानी और उनके साथी थोड़ा-थोड़ा करके बाकी के आटे को बाज़ार में बेचने के लिए लाते हैं और अपने आटे को इन ऊँचे दामों पर बेचते हैं! बाजार अब भी मांग और आपूर्ति के नियमों के अनुसार काम कर रहा है लेकिन इन जमाखोरों ने चालाकी से बाज़ार के साथ छेड़छाड़ करके अपनी जेबें गरम कर ली हैं।
अशोक, जो आनंद का भाई है और शहर में एक गरीब मज़दूर है, आमतौर पर खाने में गेहूं की रोटी पसंद करता है लेकिन अब वो आटे के बढ़ते दामों को लेकर बहुत परेशान है और इसलिए उसने दिन में सिर्फ एक बार खाना खाने का फैसला किया है।

आपने अभी तक मांग, आपूर्ति और बाजार के संतुलन के बारे में जो भी सीखा है, उसका इस्तेमाल करते हुए सरकार द्वारा कीमतों को काबू में करने के लिए लागू की गई न्यूनतम समर्थन मूल्य की नीति के पक्ष में और विरोध में दिए गए निम्नलिखित तर्कों के बारे में सोच कर बताएं कि आप इनसे सहमत हैं या नहीं और क्यों:

न्यूनतम समर्थन मूल्य	
न्यूनतम समर्थन मूल्य बाज़ार में मांग और आपूर्ति की स्वाभाविक प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करता है, जिसकी वजह से कृत्रिम आभाव या अतिरिक्त आपूर्ति की स्थिति पैदा होती है, और वस्तुओं के मूल्य उनके संतुलन मूल्य से कम या ज़्यादा हो जाते हैं। इसके कारण अर्थव्यवस्था में महंगाई बढ़ सकती है जिसका नुकसान उपभोक्ताओं को झेलना पड़ता है।	न्यूनतम समर्थन मूल्य कीमतों में होने वाले उतार-चढ़ाव से किसानों की सुरक्षा करता है और इसके ज़रिए उन्हें एक स्थिर आमदनी का भरोसा देता है। यही नहीं, इस नीति के तहत की जाने वाली खाद्यान्नों की खरीद, भारत के करीब 67% गरीब नागरिकों के खाद्यान्न सुरक्षा अधिकार सुनिश्चित करती है।

आनंद, अशोक और अमिया बानी के उदाहरण में, सोच के देखिए कि अगर सरकार ने गेहूं के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य दिया होता, तो क्या होता?

असमानता और गरीबी : असमानता के सूक्ष्म और स्थूल पहलू

अदिति प्रिया और तेजस्विनी तभाने

गरीबी क्या है?

उस व्यक्ति की स्थिति जिसके पास सामान्य या सामाजिक रूप से स्वीकार्य राशि या सामग्री का अभाव है। गरीबी तब होती है जब लोगों के पास अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए साधन नहीं होते हैं।

– **एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका**

"मूल रूप से, गरीबी विकल्पों और अवसरों से वंचित करना है, जो मानवीय गरिमा का उल्लंघन है। इसका अर्थ है समाज में प्रभावी रूप से भाग लेने की बुनियादी क्षमता का अभाव। इसका अर्थ है पर्याप्तता का अभाव - एक परिवार को खिलाने और कपड़े पहनने के लिए, स्कूल या क्लीनिक में जाने के लिए , भोजन उगाने के लिए जमीन, या अपनी आजीविका चलाने के लिए नौकरी, तथा क्रेडिट तक पहुंच का ना होना। इसका अर्थ है असुरक्षा, शक्ति हीनता और व्यक्तियों, घरों और समुदायों का बहिष्कार। इसका अर्थ है हिंसा के लिए संवेदनशीलता, और इसका अर्थ अक्सर साफ पानी या स्वच्छता तक पहुंच के बिना सीमांत या नाजुक वातावरण में रहना होता है।"

- **संयुक्त राष्ट्र , 1998**

संक्षेप में, गरीबी का अर्थ है–

क किसी चीज की कमी
ख किसी चीज की मनाही
ग किसी चीज का पहुंच ना होना

गरीबी को संकीर्ण या अधिक व्यापक रूप से परिभाषित किया जा सकता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि कल्याण को कैसे समझा जाता है।

– गरीबी कल्याण में एक स्पष्ट अभाव है।

– आय या उपभोग गरीबी से तात्पर्य जरूरतों को पूरा करने के लिए मौद्रिक संसाधनों की कमी से है।

– पूर्ण गरीबी वह गरीबी है जो जीवित रहने के लिए न्यूनतम आवश्यकताओं को स्वीकार करने के लिए निर्धारित की गई एक रेखा से नीचे है।

– सापेक्ष गरीबी दूसरों के संबंध में निर्धारित होती है।

– आश्रय गरीबी ,खाद्य गरीबी, समय गरीबी या स्वास्थ्य गरीबी उस निर्दिष्ट वस्तु की कमी को संदर्भित करती है।

– बहुआयामी गरीबी में कईअलग-अलग तरीके निहित हैं जिससे लोगों को वंचित किया जा सकता है।

– क्षणिक रुप से गरीब, गरीबी में और गरीबी से बाहर होते रहते हैं।

– लंबे समय से गरीब वह हैं जो एक समय तक या यहां तक कि अपने पूरे जीवन के लिए गरीब हैं।

– गरीबी के प्रति संवेदनशीलता भविष्य में गरीबी में रहने या गरीबी में पड़ने की संभावना या जोखिम है।

1. **गरीबी का मापन**

गरीबी रेखा आय, खपत या आमतौर पर वस्तुओं और सेवाओं की एक महत्वपूर्ण सीमा के नीचे तक पहुंच जिसके लिए व्यक्तियों को गरीब घोषित किया जाता है।

गरीबी रेखा किसी दिए गए समय में, किसी दिए गए समाज में स्वीकार्य आर्थिक भागीदारी के न्यूनतम स्तर का प्रतिनिधित्व करती है।

वैश्विक गरीबी को मापने के लिए सार्वभौमिक मानक

– विश्व बैंक ने 2005 में प्रतिदिन 1.25 डॉलर पर गरीबी रेखा निर्धारित की थी।

– बाद में 2015 में इसे संशोधित कर 1.90 डॉलर प्रतिदिन कर दिया गया।

ध्यान दें – विश्व बैंक अब उच्च - मूल्य वाली दो गरीबी रेखाओं पर रिपोर्ट करता है : डॉलर 3.20 और डॉलर 5.50 प्रतिदिन। यह रेखाएं, जो क्रमशः निम्न- और उच्च- मध्यम -आय वाले देशों के मानकों के लिए विशिष्ट हैं, डॉलर 1.90 अंतरराष्ट्रीय गरीबी रेखा के पूरक के लिए डिजाइन की गई हैं, न कि प्रतिस्थापित करने के लिए।

सोचें !

अ डॉलर 1.90 प्रतिदिन क्यों? कोई व्यक्ति किसी विशेष संख्या तक कैसे पहुंचता है?

ब प्रतिदिन 1.80 डॉलर कमाने वाले व्यक्ति और प्रतिदिन 1.95 डॉलर कमाने वाले व्यक्ति के बीच क्या अंतर है?

कर्मचारी संख्या की गणना का अनुपात (एच सी आर):

एचसीआर जनसंख्या का अनुपात है जो गरीबी रेखा p से नीचे हैं।

गरीबी अंतर अनुपात

सभी गरीब लोगों को गरीबी रेखा तक लाने के लिए आवश्यक औसत आय (या अतिरिक्त खपत) तथा औसत आय (या खपत) के औसत अनुपात के रूप में पीजीआर को परिभाषित किया गया है।

गरीबी के लिए क्षमता दृष्टिकोण

– अमर्त्य सेन (1987) द्वारा व्यक्त की गई क्षमता के अभाव के रूप में गरीबी ,समाज में कार्य करने की लोगों की क्षमता के माध्यम से उत्पन्न होने वाली भलाई को दर्शाती है।

– गरीबी तब उत्पन्न होती है जब लोगों में प्रमुख क्षमताओं की कमी होती है और इसलिए 'अपर्याप्त आय या शिक्षा, या खराब स्वास्थ्य सुरक्षा, या कम आत्मविश्वास, या शक्ति हीनता की भावना ,या बोलने की स्वतंत्रता जैसे अधिकारों की अनुपस्थिति होती है'।

" गरीबी विश्लेषण में क्षमता परिप्रेक्ष्य क्या करता है-प्राथमिक ध्यान को साधनों से हटाकर (और एक विशेष साधन जिस पर आमतौर पर विशेष ध्यान दिया जाता है, अर्थात आय) गरीबी और अभाव की प्रकृति और कारणों की समझ को उन सीमाओं तक बढ़ाना, कि लोगों के पास उसे अपनाने का कारण हो और उन उद्देश्यों को पूरा करने में सक्षम होने के लिए स्वतंत्रता के अनुरूप है।

– अमर्त्य सेन

इस प्रकार से देखा जाए तो गरीबी एक बहुआयामी घटना है।

बहुआयामी गरीबी सूचकांक (एम पी आई):

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम(यू एन डी पी) द्वारा निर्मित वैश्विक बहुआयामी गरीबी सूचकांक और ऑक्सफोर्ड गरीबी और मानव विकास पहल, लोगों द्वारा अपने दैनिक जीवन में अनुभव किए गए विभिन्न भावों पर विचार करके खराब स्वास्थ्य ,अपर्याप्त शिक्षा और निम्न जीवन स्तर सहित गरीबी को मापती है।

Half of the world's poor live in just 5 countries

Share of poor people in the world by region or country, 2015

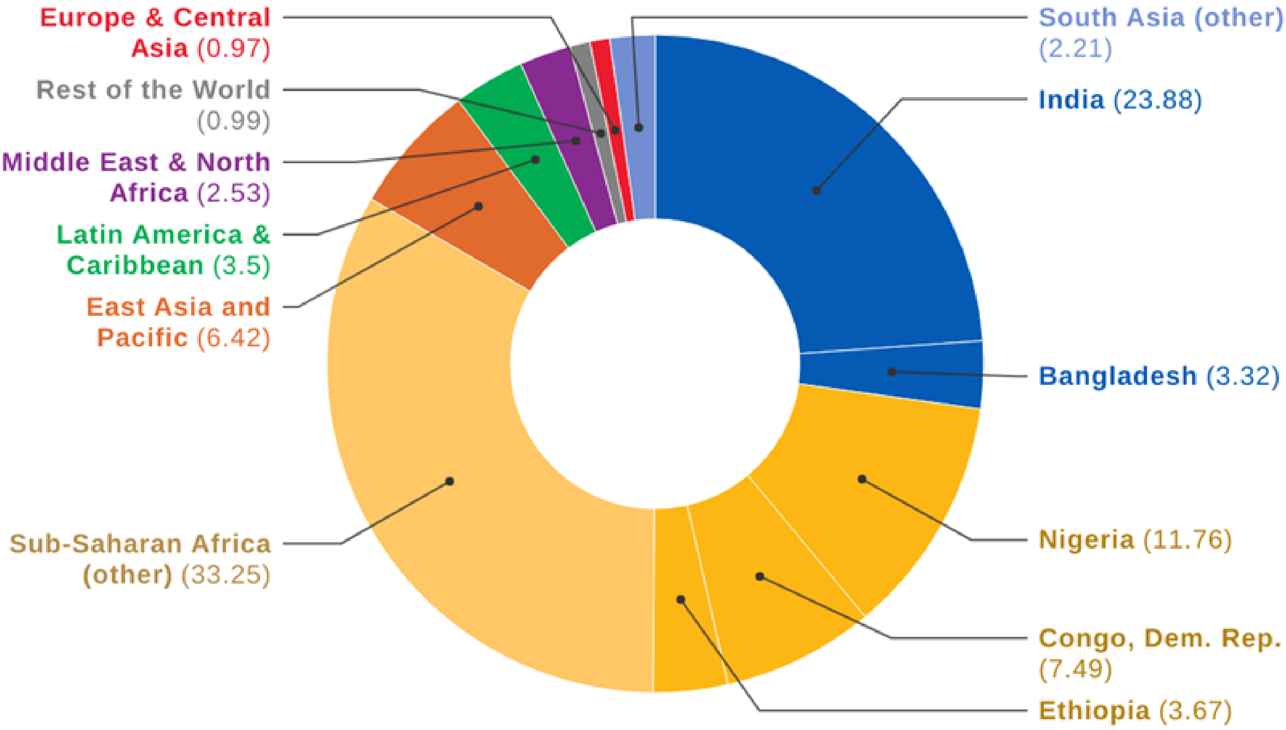

Source: PovcalNet • Embed this chart

गरीबी- विरोधी नीतियां

दो प्रकार की गरीबी विरोधी नीतियां हैं:

1. **सुरक्षा नीतियां** – यह नीतियां यह सुनिश्चित करके अल्पकालिक उपशामक प्रदान करती हैं कि वर्तमान खपत एक महत्वपूर्ण स्तर से नीचे नहीं आती है भले ही गरीब लोग लगातार गरीबी में रहते हैं।
2. **पदोन्नति नीतियां** – पदोन्नति नीति लोगों को गरीबी से बाहर निकलने की अनुमति देती है ताकि वे पर्याप्त रूप से बड़े धन लाभ को प्राप्त कर अंततः अपने स्वयं के (उच्च और स्थिर) धन के एक नियमित स्तर की स्थिति तक पहुंच सकें।

भारत में गरीबी विरोधी योजनाओं के कुछ उदाहरण :

1. – राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 : ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों की सुरक्षा और आजीविका सुनिश्चित करने के लिए यह अधिनियम न्यूनतम 100 दिन के वेतन रोजगार की गारंटी देता है।

– सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस): इसका उद्देश्य भोजन की कमी का प्रबंधन करना और आवश्यक खाद्य वस्तुओं को सस्ती कीमतों पर वितरित करना है। गरीबों को खाद्य संसाधन आवंटित करने के लिए जून 1997 में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टीपीडीएस)शुरू की गई।

– प्रधानमंत्री आवास योजना- ग्रामीण (पी एम ए वाय - जी): इस योजना के माध्यम से सरकार 2022 तक सभी के लिए आवास प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है। इसका उद्देश्य शौचालय, एलपीजी कनेक्शन, बिजली कनेक्शन और पीने के पानी सहित सभी बुनियादी सुविधाओं के साथ ठोस और स्थाई आवास प्रदान करना है।

5. वृद्धि बनाम विकास

" हम सभी के पास विकास की सहज धारणाएं हैं।" जब हम विकसित समाज की बात करते हैं तो हम अपने दिमाग में ऐसे समाज की कल्पना करते हैं जिसमें लोग अच्छी तरह से खाते पीते हैं और अच्छी तरह से कपड़े पहनते हैं, विभिन्न प्रकार की वस्तुओं तक उनकी पहुंच होती है, कुछ अवकाश और मनोरंजन की विलासिता होती है और वे एक स्वस्थ वातावरण में रहते हैं। हम एक ऐसे समाज के बारे में सोचते हैं जो हिंसक भेदभाव से मुक्त समानता के सहनीय स्तर के साथ हो, वहां लोगों को उचित चिकित्सा देखभाल मिलती हो और लोगों को फुटपाथ पर सोना नहीं पड़ता हो। संक्षेप में, हममें से अधिकांश इस बात पर जोर देंगे कि एक विकसित राष्ट्र के लिए न्यूनतम आवश्यकता यह है कि जीवन की भौतिक गुणवत्ता उच्च हो, और एक समान रूप से समृद्ध अल्पसंख्यक तक सीमित होने के बजाय समान हो।"

– देबराज रे

हमें कैसे पता चलेगा कि कोई समाज" विकसित" है ?

– किसी राष्ट्र के भौतिक कल्याण की स्थिति उसके प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पाद में काफी सटीक रूप से पता चल जाती है (जी एन पी)।

सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी): जीडीपी अंतिम वस्तुओं और सेवाओं के मौद्रिक मूल्य को मापता है – यह वह है जिसे अंतिम उपयोगकर्ता द्वारा खरीदा जाता है –यह एक निश्चित अवधि में किसी देश में उत्पादित होता है (एक चौथाई वर्ष कह सकते हैं)। यह किसी देश की सीमाओं के भीतर उत्पन्न सभी आउटपुट की गणना करता है।

– प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद - यह देश की कुल जनसंख्या से विभाजित सकल घरेलू उत्पाद है।

– आर्थिक वृद्धि - यह समय के साथ किसी देश की अर्थव्यवस्था के आकार में वृद्धि को दर्शाता है। किसी अर्थव्यवस्था का आकार आमतौर पर उसके कुल सकल घरेलू उत्पाद द्वारा मापा जाता है।

– क्योंकि राष्ट्रीय सर सर पर आर्थिक विकास को एक सचेत लक्ष्य के रूप में अपनाया गया था, ऐसे लंबे सोपान रहे हैं जिनके दौरान विकास का प्रदर्शन केवल प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि (जीडीपी) के मापदंड से था।

पिछले कुछ दशकों में, यह प्रथा कुछ ही समय में तेजी से प्रचलन में आ गई है।

– विकास को दर्शाने के लिए सकल घरेलू उत्पाद की कुछ सीमाएं:

ख। विकास केवल आय के बारे में नहीं हैं, हालांकि आय

(सामान्यतः आर्थिक धन) का इससे बहुत कुछ लेना-देना है।

ख जीएनपी/ जीडीपी और विकास के अन्य वांछित विशेषताओं के बीच सहसंबंध स्वचालित नहीं हैं और कई मामलों में ऐसे कनेक्शन बिल्कुल भी मौजूद नहीं हो सकते हैं।

– सकल घरेलू उत्पाद या जीडीपी- प्रति व्यक्ति हमें यह नहीं बताता कि किसी देश की आबादी के भीतर आय कैसे वितरित की जाती है।

विकास के उपाय – विकास सभी लोगों के लिए जीवन की उच्च गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए एक बहुआयामी उपक्रम है।

विकास सभी लोगों के लिए जीवन की उच्च गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए एक बहुआयामी उपक्रम है।

संयुक्त राष्ट्र

मानव विकास सूची : मानव विकास सूचकांक (एचडीआई) मानव विकास के प्रमुख आयामों में औसत उपलब्धि का एक संक्षिप्त मापदंड है :

अ लंबा और स्वस्थ जीवन,
ब जानकार होना तथा
स एक सभ्य जीवन स्तर का होना।

एच डी आई तीनों में से प्रत्येक के लिए सामान्यीकृत सूचकांकों का ज्यामितीय माध्य है।

असमानता : आर्थिक असमानता वह मूलभूत असमानता है जो एक व्यक्ति को कुछ भौतिक विकल्पों की अनुमति देती है जबकि दूसरे व्यक्ति को उन्हें विकल्पों से वंचित करती है।

– अभी तक गरीबी, असमानता से अलग से संबंधित है। असमानता का संबंध कल्याण के पूर्ण वितरण से है ; गरीबी केवल वितरण के निचले सिरे पर केंद्रित है– जो गरीबी रेखा से नीचे आते हैं।

– असमानताएं मूल रूप से संबंधपरक असमानताओं के बारे में हैं ,अधिकारों के निष्पक्ष और समकक्ष आनंद से इनकार और विभिन्न लोगों के श्रेय, स्थिति, सम्मान, और स्वतंत्रता में मनमानी विसंगतियों की दृढ़ता है।' (यूनिसेफ और संयुक्त राष्ट्र महिलाएं, 2013)।

– आर्थिक असमानता अक्सर अन्य सामाजिक असमानताओं के संयोजन के रूप में पाई जाती है जिसका सामना लिंग, विकलांगता, नस्ल, जातीयता, जाति धर्म या भाषा जैसी पहचान के कारण हाशिए पर रहने वाले लोगों द्वारा किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप असमानताएं पारस्परिक रूप से मजबूत और अंतर्विभाजक होती हैं ।

आर्थिक असमानता ,भारत 2000 - 2021

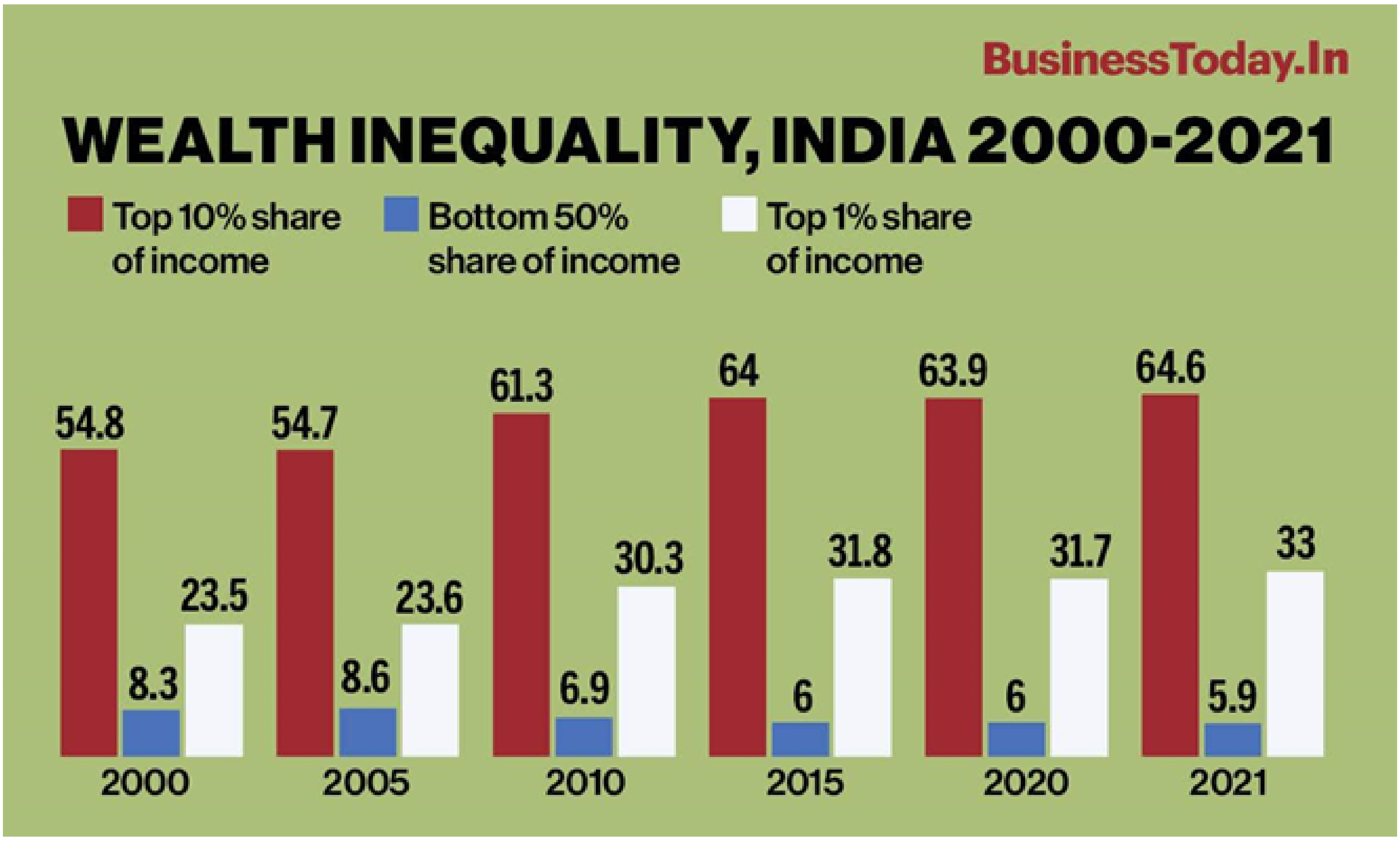

आय का शीर्ष 10% हिस्सा   आय का निचला 50% हिस्सा   आय का शीर्ष 1% हिस्सा

नोट : धन = परिवारों द्वारा धारित गैर वित्तीय और वित्तीय अस्थियों का कुल मूल्य
स्रोत: विश्व असमानता डेटाबेस

जीडीपी और राष्ट्रीय आय लेखांकन

ज़ीको दासगुप्ता

अवधारणा और संदर्भ: सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) किसी देश में उत्पादित कुल उत्पादन है। इसमें टूथब्रश से लेकर ट्रैक्टर, जूते, बाल कटाने, सड़क की सफाई, स्टील, ऑटोमोबाइल, किताबें और अर्थव्यवस्था में लाखों अन्य सेवाओं और उत्पादों तक सब कुछ शामिल है। इसका उपयोग समग्र संकेतक के रूप में एक देश की आर्थिक गतिविधि के स्तर का वर्णन करने के लिए किया जाता है।

सकल घरेलू उत्पाद के 3 माप हैं- समग्र व्यय, समग्र आय और समग्र उत्पादन। समग्र व्यय घरेलू अर्थव्यवस्था के उत्पादों पर परिवारों, फर्मों, सरकार और अन्य देशों के निवासियों द्वारा किया गया कुल खर्च है। समग्र आय अर्थव्यवस्था में प्राप्त सभी आय का योग है और इसमें मजदूरी, लाभ, स्वरोजगार की आय और सरकार द्वारा प्राप्त कर शामिल हैं। समग्र उत्पादन एक अर्थव्यवस्था के सभी उत्पादकों द्वारा वस्तुओं और सेवाओं का कुल मूल्यवर्धन है

समग्र घरेलू उत्पाद के 3 माप एक दूसरे से संबंधित हैं जिसे आय का चक्रीय प्रवाह कहा जाता है। सर्कुलर फ्लो शब्द फ्रांस में अठारहवीं शताब्दी के अर्थशास्त्रियों के एक समूह से निकला है, जिन्हें फिजियोक्रेट्स कहा जाता है, जिन्होंने मानव शरीर में रक्त के गोलाकार प्रवाह जैसी अर्थव्यवस्था के कामकाज का वर्णन किया है। सर्कुलर फ्लो की धारणा इस तथ्य को संदर्भित करती है कि पैसा (i) खर्च करने वाले से निर्माता की ओर, (ii) निर्माता से अपने कर्मचारियों या शेयरधारकों के पास जाता है और फिर (iii) आगे के आउटपुट को खरीदने पर फिर से खर्च किया जाता है। इस वृत्ताकार संबंध को चित्र 1 के रूप में वर्णित किया जा सकता है।

आकृति 1

आय के चक्रीय प्रवाह की उपस्थिति में, समग्र व्यय समग्र उत्पादन के बराबर होता है और समग्र उत्पादन समग्र आय के बराबर होता है। वृत्ताकार प्रवाह एक ओर व्यक्ति और दूसरी ओर समष्टि अर्थव्यवस्था के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर को दर्शाता है।

यद्यपि किसी व्यक्ति का व्यय उसकी आय पर निर्भर करता है, फिर भी कोई प्राथमिक कारण नहीं है कि जब वह अतिरिक्त व्यय करेगा तो उसकी आय में वृद्धि होगी। हालाँकि, समष्टि अर्थव्यवस्था के मामले में, व्यय और आय आंतरिक रूप से संबंधित हैं। यदि पूरी अर्थव्यवस्था के लिए व्यय बढ़ा दिया जाता है, तो यह उच्च कुल आय उत्पन्न कर सकता हैं क्योंकि धन, खर्च करने वालों से उत्पादकों और उत्पादकों से श्रमिकों या शेयरधारकों की ओर प्रवाहित होता है।

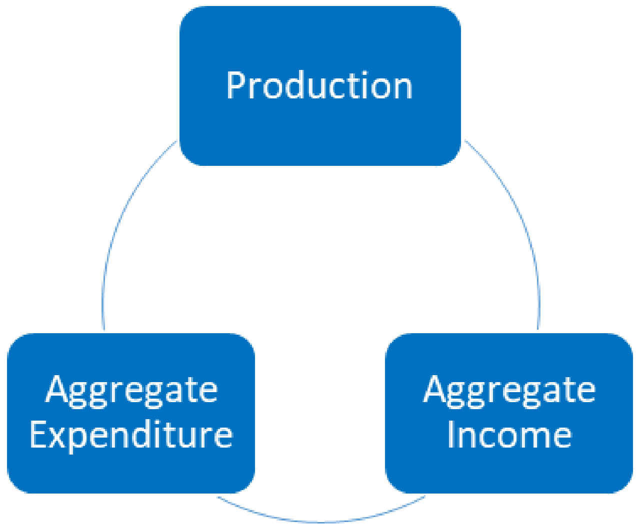

जीडीपी की प्रवृत्तियों का विश्लेषण: जीडीपी की गणना एक अर्थव्यवस्था में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं पर की गई खरीद के योग के रूप में की जा सकती है और इसमें 4 व्यापक घटक शामिल हैं- उपभोग, पूंजी निर्माण (निवेश), सरकारी व्यय और शुद्ध निर्यात।

उपभोग में परिवारों द्वारा खरीदे गए सामान और सेवाएं शामिल हैं। पूंजी निर्माण या निवेश व्यय नए उपकरणों, नए वाणिज्यिक भवनों और नए आवास के निर्माण पर होने वाला खर्च है। सरकारी व्यय सरकार द्वारा खपत और निवेश खरीद का प्रतिनिधित्व करता है।

निर्यात घरेलू रूप से उत्पादित सामान और सेवाएं हैं जो अन्य देशों में परिवारों, फर्मों और सरकारों द्वारा खरीदे जाते हैं। आयात घरेलू अर्थव्यवस्था में परिवारों, फर्मों और सरकारों द्वारा खरीदे गए सामान और सेवाएं हैं जो अन्य देशों में उत्पादित होते हैं। शुद्ध निर्यात निर्यात और आयात के बीच का अंतर है।

उच्च उत्पादन इन चार व्यापक घटकों में से किसी घटक के व्यय में वृद्धि के साथ जुड़ा हुआ है। उच्च उत्पादन के स्रोत की जांच करने का एक उपयोगी तरीका निम्नलिखित प्रश्न पूछने से हो सकता है: कौन से घटक में व्यय मुख्य रूप से उत्पादन विस्तार के लिए जिम्मेदार हैं? इस प्रश्न को संबोधित करने के लिए उस तरीके का विश्लेषण करने की आवश्यकता है जिसमें उत्पादन विस्तार के दौरान प्रत्येक घटक में व्यय का हिस्सा बदलता है।

उत्पादन विस्तार (या संकुचन) की सीमा का विश्लेषण करने का एक प्रमुख संकेतक जीडीपी विकास दर है। यदि 2021-22 में जीडीपी का स्तर 50 रुपये है और 2022-23 के दौरान यह बढ़कर 53 रुपये हो जाता है, तो 2022-23 के दौरान जीडीपी विकास दर 6% है। यह एक निश्चित अवधि के दौरान उत्पादन में वृद्धि (या कमी) की सीमा का एक माप है। पिछले 3 दशकों में, भारत में उच्च विकास के प्रकरणों को सकल घरेलू उत्पाद में निवेश और निर्यात के हिस्से में वृद्धि के साथ जोड़ा गया है। इसी तरह, जीडीपी में कम वृद्धि की अवधि जीडीपी में निवेश और निर्यात के हिस्से में कमी से जुड़ी हुई है।

समष्टिआर्थिक सिद्धांत

एक ऐसी अर्थव्यवस्था पर विचार करें जो 100 रुपये मूल्य की वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करती है। लेखांकन नियम से, हम जानते हैं कि कुल व्यय और आय दोनों 100 रुपये के बराबर होंगे। लेकिन लेखांकन नियम हमें उत्पादन निर्धारित करने के तरीके के बारे में कुछ नहीं बताता है। एक देश के उत्पादन में विस्तार कब होता है? उत्पादन के सामने आने वाली क्या बाधाएं हैं? इन सवालों का जवाब अर्थव्यवस्था की विशिष्ट विशेषताओं पर निर्भर करता है।

मांग की बाधा: चूंकि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में वस्तुओं का उत्पादन बाजार के लिए किया जाता है, इसलिए वस्तु उत्पादन का स्तर मुख्य रूप से 'बाजार क्या लेगा' द्वारा तय किया जाता है। बाजार का आकार समग्र मांग या व्यय से निर्धारित होता है। इस प्रकार समग्र अर्थ में, उत्पादन को समग्र मांग के स्तर से निर्धारित किया जा सकता है। एक अर्थव्यवस्था जहां उत्पादन समग्र मांग के स्तर से निर्धारित होती है उसे मांग विवश अर्थव्यवस्था कहा जाता है।

समग्र मांग उपभोग , पूंजी निर्माण, सरकारी व्यय और शुद्ध निर्यात के योग के रूप में विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है। अन्य बातों के अलावा, यह व्यययोग आय और ब्याज दर के स्तर पर निर्भर करती है। व्यययोग आय करों के बाद शुद्ध आय है। सरकारी व्यय और कर राजकोषीय नीति की प्रकृति पर निर्भर करता हैं। निजी क्षेत्र का निवेश व्यय अपेक्षित लाभ और ब्याज दरों पर निर्भर करता है। निर्यात वैश्विक मांग के स्तर, घरेलू और विदेशी देशों की कीमतों और अंकित मूल्य की विनिमय दर पर निर्भर करता है। चूंकि खरीद आय पर निर्भर करती है, आयात आय से प्रभावित होते हैं।

कोई प्राथमिक कारण मौजूद नहीं है कि समग्र मांग बिल्कुल ऐसी होगी कि कोई देश अपने सभी संसाधनों का उपयोग करके अधिकतम या संभावित उत्पादन का उत्पादन करने में सक्षम हो। ऐसा इसलिए क्योंकि व्यय का एक घटक, अर्थात् निजी निवेश, अपेक्षित लाभ के आधार पर किया जाता है। चूंकि व्यक्तिगत पूंजीपति अन्य पूंजीपतियों की अपेक्षाओं को पूरी तरह से जाने बिना अपनी अपेक्षाएं बनाते हैं, वे पूरी तरह से यह जाने बिना निवेश करते हैं कि दूसरे कितना निवेश कर रहे हैं या बाजार का आकार क्या है। निवेश संबंधी निर्णय लेते समय पूंजीपतियों के बीच समन्वय की समस्या ऐसी स्थिति पैदा कर सकती है जहां समग्र व्यय किसी देश के संभावित उत्पादन से कम हो।

निवेश, निर्यात या सरकारी व्यय में कोई भी वृद्धि दो मायने में एक मांग-बाधित अर्थव्यवस्था के उत्पादन को बढ़ाती है। सबसे पहले, वस्तुओं पर अधिक खर्च करके अधिक मांग पैदा कर सीधे उनके उत्पादन को बढ़ाती है। दूसरे, चूंकि खपत आय पर निर्भर करती है और उच्च व्यय अधिक आय उत्पन्न करता है, उच्च गैर-उपभोग व्यय जैसे निवेश, निर्यात और सरकारी व्यय भी आय में वृद्धि करके अतिरिक्त उपभोग व्यय उत्पन्न करते हैं। ऐसा तंत्र जहां एक अर्थव्यवस्था उच्च व्यय के कारण उत्पादन विस्तार का एक क्रम दर्ज करती है, यह प्रक्रिया गुणक प्रभाव कहलाती है।

संरचनात्मक बाधा: मांग बाधाओं के अलावा, एक विकासशील देश का सकल घरेलू उत्पाद भी संरचनात्मक बाधा का सामना कर सकता है । मुख्य रूप से संरचनात्मक बाधाएँ दो प्रकार की हैं।

पहली कृषि संबंधी बाधा है, जहां किसी दी हुई कीमत पर कृषि-वस्तुओं की उपलब्धता से समग्र उत्पादन बाधित हो जाता है। मांग बढ़ाने का कोई भी प्रयास कृषि कीमतों और मुद्रास्फीति दर में तेज वृद्धि ला सकता है जो अंततः अस्थिर होता है। ऐसी अर्थव्यवस्थाओं के सकल घरेलू उत्पाद को नीतियों जो किसी दिए गए समय में कृषि उत्पादन में वृद्धि करती हैं
को लागू करके बढ़ाया जा सकता है

दूसरी संरचनात्मक बाधा विदेशी मुद्रा भंडार की उपलब्धता से उत्पन्न हो सकती है। मांग बढ़ने से उत्पादन नहीं बढ़ाया जा सकता क्योंकि विदेशी मुद्रा की कमी के कारण अतिरिक्त आयात बिलों का भुगतान करना संभव नहीं हो पाता है। ऐसी अर्थव्यवस्थाओं में जीडीपी बढ़ाने के लिए आवश्यक शर्त विदेशी मुद्रा भंडार की उपलब्धता में वृद्धि करना है।

भारत की विकास अवस्थाएँ:

भारतीय अर्थव्यवस्था ने अपनी स्वतंत्रता के बाद से विभिन्न अवधियों में विभिन्न प्रकार की बाधाओं का सामना किया है। 70 के दशक के दौरान विकास की मंदी कृषि उत्पादन की कमी के कारण थी, जबकि 1991 का आर्थिक संकट एक बाध्यकारी विदेशी मुद्रा की बाधा को दर्शाता है। 90 के दशक की शुरुआत में नई आर्थिक नीतियों की शुरूआत ने विदेशी मुद्रा भंडार और उच्च कृषि अधिशेष की अधिक पहुंच के कारण संरचनात्मक बाधाओं को काफी हद तक कम कर दिया।

हालाँकि, 90 के दशक से या जिसे उदारीकरण के बाद की अवधि के रूप में वर्णित किया जा सकता है, सकल घरेलू उत्पाद समग्र मांग के स्तर से विवश है।

उदारीकरण की अवधि के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था में उच्च और निम्न विकास चरणों को वैश्विक मांग में समान परिवर्तनों के संदर्भ में काफी हद तक समझाया जा सकता है।

वैश्विक मांग में परिवर्तन निर्यात और मांग को प्रभावित करता है, जहां यह अपेक्षित मुनाफे को प्रभावित करके निवेश में बदलाव लाता है। जबकि वैश्विक उछाल ने 90 के दशक की शुरुआत और 2000 के दशक के दौरान भारत में उच्च सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर का नेतृत्व किया, 2017-18 के बाद से वैश्विक मंदी ने भारत को लंबे समय तक आर्थिक मंदी की ओर धकेलने में प्रमुख भूमिका निभाई है।

उदारीकरण की अवधि में विकास की जो कहानी उभरकर सामने आई, वह बाहरी निर्भरता की है, जहां घरेलू अर्थव्यवस्था काफी हद तक मांग और विकास दर को बनाए रखने के लिए अनुकूल बाहरी आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर है। यह उत्पादन वृद्धि दर को स्थिर करने के लिए घरेलू नीतियों में बाधाओं को इंगित करता है।

कार्यात्मक आय वितरण

अवधारणा और संदर्भ:

कार्यात्मक आय वितरण लोगों के समूहों को उत्पादन प्रक्रिया के साथ उनके संबंधों की प्रकृति के अनुसार वर्गीकृत करता है। ऐसे समूहों को वर्ग कहा जा सकता है। जिस तरह से एक अर्थव्यवस्था की सकल आय विभिन्न वर्गों में विभाजित हो जाती है, यह कार्यात्मक आय वितरण सिद्धांत का केंद्रीय विषय है। अपने सरलतम रूप में,

एक पूंजीवादी फर्म में उत्पादन से उत्पन्न आय को श्रम और पूंजी की आय में विभाजित किया जा सकता है। पूंजी की आय लाभ है, जबकि श्रम आय में सभी श्रमिकों द्वारा अर्जित मजदूरी आय शामिल है। आय में श्रम का हिस्सा उत्पादन में मजदूरी बिल का हिस्सा है। वेतन हिस्सेदारी में कमी उच्च लाभ हिस्सेदारी या पूंजी की आय में हिस्से से जुड़ी होगी

80 के दशक के बाद से दुनिया भर के अधिकांश देशों में आय में पूंजी की हिस्सेदारी में समान वृद्धि के साथ आय में श्रम की हिस्सेदारी में तेज गिरावट दर्ज की गई। भारतीय अर्थव्यवस्था में भी इसी तरह की प्रवृत्ति दिखाईदी, खासकर 90 के दशक के बाद से। कार्यात्मक आय वितरण को प्रभावित करने वाले कौन से कारक हैं?

संघर्ष और आय वितरण:

श्रमिकों के पास एक ऐसी वस्तु है जो उत्पादन के लिए आवश्यक है, अर्थात् श्रम के घंटे। वे पूंजीपतियों को काम के घंटे असल मजदूरी दर पर बेच सकते हैं। पूंजीपति संपत्ति या पूंजी के मालिक होते हैं जिसके द्वारा वे उत्पादन कर सकते हैं, श्रम के घंटे खरीद सकते हैं और उत्पादन की प्रक्रिया को नियंत्रित कर सकते हैं।

उत्पादन प्रक्रिया को नियंत्रित करने में वस्तुओं की कीमत निर्धारित करना, काम के घंटों को नियंत्रित करना और उत्पादन में प्रयुक्त प्रौद्योगिकी की प्रकृति को प्रभावित करना शामिल हो सकता है। मजदूरी या लाभ का हिस्सा असल मजदूरी दरों, प्रौद्योगिकी की प्रकृति, काम के घंटों की सीमा और फर्मों द्वारा निर्धारित कीमतों पर निर्भर करता है।

श्रमिक आय में श्रम की हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए मज़दूरी दर का उपयोग एक साधन के रूप में करते हैं, जबकि पूँजीपति अपने लाभ के हिस्से को बढ़ाने के लिए कीमतों, प्रौद्योगिकी और काम के घंटों का उपयोग उपकरणों के रूप में करते हैं। श्रम और पूंजी उत्पादन प्रक्रिया के भीतर एक परस्पर विरोधी संबंध में प्रवेश करते हैं क्योंकि आय में श्रम और पूंजी की हिस्सेदारी श्रम और पूंजी की सापेक्ष सौदेबाजी की शक्ति से प्रभावित होती हैं।

उच्च असल मजदूरी दर सभी श्रमिकों के लिए उच्च श्रम आय की ओर ले जाती है और इसलिए, आय में श्रम का हिस्सा बढ़ जाता है। जबकि मजदूरी दर श्रमिकों की सौदेबाजी की शक्ति पर निर्भर करती है, जो मौजूदा समष्टि आर्थिक नीतिगत ढांचे, श्रम कानूनों की प्रकृति और अन्य संस्थागत या आर्थिक कारकों पर निर्भर करती है।

ऊंची कीमतों का मतलब है कि मजदूरों को उतनी ही मजदूरी देने के बावजूद, पूंजीपति अब वस्तु को अधिक कीमत पर बेचकर अधिक राजस्व और लाभ कमा सकता है। इस प्रकार, कीमत बढ़ने पर आय में लाभ का हिस्सा बढ़ता है। अन्य बातों के अलावा, व्यक्तिगत पूंजीपति किस हद तक कीमतों में वृद्धि कर सकते हैं, यह पूंजीपति वर्ग के बीच प्रतिस्पर्धा की डिग्री पर निर्भर करता है।

जब कीमतें अपरिवर्तित रहती हैं तो श्रम-बचत तकनीक का अधिक से अधिक उपयोग लाभ की हिस्सेदारी बढ़ा सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह पूंजीपतियों को कम श्रम घंटों का उपयोग करके समान मात्रा में उत्पादन करने की अनुमति देता है। यह उत्पादन प्रक्रिया में आवश्यक नियुक्त किये गए श्रमिकों की मात्रा को कम करके श्रम के हिस्से को कम करता है।

काम के घंटों में वृद्धि कम श्रमिकों के साथ उसी मात्रा में उत्पादन की अनुमति देती है, क्योंकि उतनी ही मात्रा में श्रमिक अब अधिक काम करते हैं। प्रत्येक श्रमिक द्वारा प्राप्त किसी भी मजदूरी दर का तात्पर्य यह है कि फर्म उसी मात्रा में उत्पादन करने के लिए कम श्रम लागत वहन करती है। इस प्रकार, उच्च कार्य घंटों का अर्थ है आय में श्रम के वेतन की कम हिस्सेदारी।

आय वितरण और जीडीपी:आय में श्रम की हिस्सेदारी में परिवर्तन मांग के कम से कम दो अलग-अलग घटकों- उपभोग व्यय और शुद्ध निर्यात को प्रभावित करके सकल मांग और सकल घरेलू उत्पाद में परिवर्तन से जुड़ा हो सकता है।
उपभोग व्यय: आय में श्रम की हिस्सेदारी में कमी से कुल उपभोग व्यय में कमी आती है। इसका कारण यह है कि जहां विभिन्न वर्गों की खपत उनकी आय पर निर्भर करती है, वहीं श्रमिकों का उपभोग व्यय आम तौर पर पूंजीपतियों की तुलना में अधिक बदलता है, भले ही उनकी संबंधित आय में समान राशि का परिवर्तन हो। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि वेतन आय में 100 रुपये की गिरावट आई है और मुनाफे में 100 रुपये की वृद्धि हुई है। श्रमिकों की खपत घट जाएगी और पूंजीपतियों की खपत बढ़ जाएगी। लेकिन अगर श्रमिकों का उपभोग व्यय पूंजीपतियों की तुलना में अधिक बदलता है, तो पूंजीपतियों की उपभोग व्यय में वृद्धि श्रमिकों के उपभोग में गिरावट की भरपाई नहीं कर सकती है। कुल उपभोग व्यय में कमी आएगी। आय में श्रम की हिस्सेदारी और उपभोग के बीच यह संबंध भारत सहित कई देशों में देखा गया है।

शुद्ध निर्यात: ऐसे कारक जो श्रम लागत को कम करते हैं और आय में श्रम की हिस्सेदारी में कमी लाते हैं, उन्हें घरेलू वस्तुओं की कम कीमतों से भी जोड़ा जा सकता है। मान लीजिए, उत्पादन की 1 इकाई का उत्पादन किया जा सकता है जब पूंजीपति 10 रुपये के मजदूरी बिल का भुगतान करते हैं। यह भी मान लीजिए कि इस वस्तु की कीमत 15 रुपये है, जैसे कि लाभ 5 रुपये है। इस प्रकार, आय में श्रम की हिस्सेदारी का हिस्सा 67% है और लाभ का हिस्सा 33% है . अब मान लीजिए कि श्रम लागत घटकर रु 7 श्रम-बचत प्रौद्योगिकी के अधिक उपयोग के कारण और पूंजीपति कीमतों को 14 रुपये तक कम करके उत्पादन की कम लागत का जवाब देते हैं। ध्यान दें कि इस मामले में, मजदूरी का हिस्सा 50% और कीमतों में 1 रुपये तक गिर जाता है।

लेकिन अगर किसी भी दी हुई विदेशी कीमतों के संबंध में घरेलू कीमतें गिरती हैं, तो घरेलू सामान अपेक्षाकृत सस्ता हो जाता है और विदेशी सामान अपेक्षाकृत महंगा हो जाता है। निर्यात बढ़ सकता है क्योंकि विदेशी बाजार में घरेलू सामान सस्ता हो जाता है, जबकि घरेलू बाजार में विदेशी सामान महंगा होने से आयात में गिरावट आ सकती है। इस प्रकार इकाई की श्रम लागत और आय में श्रम की हिस्सेदारी में कमी को उच्च शुद्ध निर्यात के साथ जोड़ा जा सकता है। हाल के दिनों में, कई पूर्वी एशियाई देशों ने इस तंत्र के माध्यम से उच्च शुद्ध निर्यात प्राप्त किया है
श्रम की आय में कम हिस्सेदारी का सकल घरेलू उत्पाद पर शुद्ध प्रभाव उस तरीके पर निर्भर करता है जिससे यह उपभोग व्यय और शुद्ध निर्यात को प्रभावित करता है। भारत के मामले में, आय में श्रम की निम्न हिस्सेदारी का कुल मांग पर नकारात्मक प्रभाव पाया गया है।

रोजगार और बेरोजगारी

मुख्य अवधारणाएँ: श्रम बाजार के कुछ प्रमुख संकेतक श्रम शक्ति की भागीदारी दर, रोजगार की दर और बेरोजगारी की दर हैं।
श्रम शक्ति की भागीदारी दर कामकाजी उम्र की आबादी में श्रम शक्ति का हिस्सा है। जबकि कामकाजी उम्र की आबादी एक विशिष्ट आयु वर्ग के लोगों की संख्या को इंगित करती है जो संभावित रूप से नौकरी की तलाश कर सकते हैं, श्रम बल में कामकाजी उम्र की आबादी में वे लोग शामिल हैं जो वास्तव में नौकरी की तलाश में हैं। कामकाजी उम्र की आबादी का वह हिस्सा जो नौकरी की तलाश नहीं कर रहा है, उसे श्रम शक्ति से बाहर (निष्क्रिय) कहा जा सकता है।
श्रम शक्ति या तो नियोजित (स्व-रोजगार सहित) या बेरोजगार हो सकता है। नियोजित व्यक्ति या तो गैर-कृषि औपचारिक क्षेत्र या गैर-कृषि अनौपचारिक क्षेत्र या कृषि क्षेत्र में स्थित हो सकते हैं। बेरोजगार वे लोग हैं जो नौकरी की तलाश में थे, लेकिन एक संदर्भ अवधि के दौरान बिना काम के थे।
रोजगार दर कामकाजी उम्र की कुल आबादी में नियोजित श्रम शक्ति का हिस्सा है। बेरोजगारी दर कुल श्रम शक्ति में बेरोजगारों का हिस्सा है। कामकाजी उम्र की आबादी, श्रम शक्ति, नियोजित और बेरोजगार के बीच संबंध को चित्र 2 में वर्णित किया गया है।

रोजगार का प्रश्न: विकसित देशों की तुलना में, भारत जैसे विकासशील देश में बेरोजगारी की दर ऐतिहासिक रूप से कम रही है। ऐसा इसलिए है क्योंकि विकसित देशों के विपरीत, भारत बेरोजगारों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान नहीं करता है। बल्कि, भारतीय अर्थव्यवस्था में जो कायम है, वह है अनौपचारिक और कृषि क्षेत्र में कम आय वाली नौकरियां। इस प्रकार, भारत जैसे विकासशील देशों की केंद्रीय चुनौतियों में से एक गैर-कृषि औपचारिक क्षेत्र में रोजगार बढ़ाना रहा है।

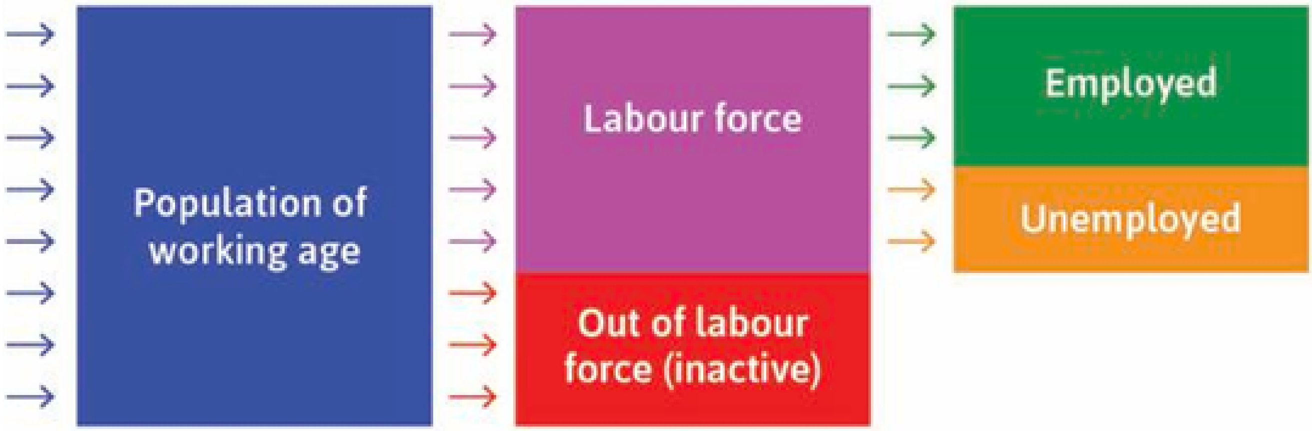

औपचारिक क्षेत्र में काम पर रखे गए श्रमिकों की कुल मात्रा फर्मों द्वारा मांगे गए श्रम की मात्रा पर निर्भर करती है। श्रम की मांग दो कारकों पर निर्भर करती है।

प्रथमतः, चूंकि श्रम घंटे खरीदने का उद्देश्य अन्य वस्तुओं के उत्पादन के लिए इसका उपयोग करना है, श्रम घंटे की मांग उत्पादन या सकल मांग के स्तर पर निर्भर करती है। उत्पादन का स्तर जितना अधिक होगा, औपचारिक क्षेत्र में श्रम की मांग और रोजगार उतना ही अधिक होगा। दूसरे, श्रम की मांग की मात्रा प्रौद्योगिकी की प्रकृति पर निर्भर करती है। श्रम-बचत तकनीक का जितना अधिक उपयोग होगा, श्रम उत्पादकता उतनी ही अधिक होगी और किसी दिए गए उत्पादन के उत्पादन के लिए श्रम की मांग कम होगी।

हाल की अवधि में भारतीय अर्थव्यवस्था को रोजगार के प्रश्न पर विशेष बाधाओं का सामना करना पड़ा है। पिछले 3 दशकों में विभिन्न प्रकरणों के दौरान, श्रम की मांग पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले कारक या तो श्रम बचत प्रौद्योगिकियों का अधिक उपयोग या कम उत्पादन वृद्धि दर थे।

नीतिगत बहसः श्रम बाजार के संदर्भ में, मुख्य रूप से दो प्रकार की नीतियां हैं जिन पर हाल के दिनों में बहस हुई है। पहला श्रम सुधार की नीति है, जबकि दूसरे में रोजगार गारंटी कार्यक्रमों का कार्यान्वयन शामिल है।

श्रम सुधार नीतियों में आम तौर पर न्यूनतम मजदूरी दर में कमी, काम के घंटों का विस्तार और काम पर रखने और निकलने में लचीलेपन में वृद्धि शामिल है। उनमें से प्रत्येक या तो उत्पादन में श्रम की हिस्सेदारी को या मजदूरी दर को कम करके या उत्पादन की एक निश्चित मात्रा का उत्पादन करने के लिए आवश्यक श्रमिकों की मात्रा को कम करके इकाई में श्रम लागत कम करता है।

श्रम सुधार के समर्थक भारत में "बहुत अधिक मजदूरी" के संदर्भ में रोजगार की विवशता की व्याख्या करते हैं, जिससे अतिरिक्त श्रमिकों को अवशोषित करना फर्मों के लिए लाभहीन हो जाता है। चूंकि 'उच्च मजदूरी' को कठोर श्रम कानूनों के अस्तित्व के संदर्भ में समझाया गया है, इसलिए श्रम सुधारों के कार्यान्वयन पर फर्मों की इकाई में श्रम लागत को कम करने का तर्क दिया गया है। श्रम लागत में कमी के बाद, पूंजीपतियों द्वारा अधिक श्रमिकों को काम पर रखने और अधिक उत्पादन करने के लिए इस अतिरिक्त निधि का उपयोग करने का अनुमान लगाया जा सकता है।
इस तर्क की दो केंद्रीय सीमाएँ हैं। प्रथमतः, यह इस तथ्य की उपेक्षा करता है कि उत्पादन और निवेश के फैसले इस उम्मीद पर आधारित होते हैं कि बाजार संसाधनों की उपलब्धता या बचत के बजाय कितना अवशोषित करेगा। इस प्रकार, कम श्रम लागत या अतिरिक्त धन की उपलब्धता अतिरिक्त उत्पादन या नौकरियों की गारंटी नहीं देता है। दूसरे, यह कुल मांग और उत्पादन पर श्रम लागत और श्रम की हिस्सेदारी में कमी के प्रतिकूल प्रभाव की अनदेखी करता है। भारतीय अर्थव्यवस्था के मामले में, वेतन हिस्सेदारी में कमी का समग्र मांग पर नकारात्मक प्रभाव पाया गया है। संक्षेप में, श्रम सुधार का तर्क अवास्तविक मान्यताओं पर आधारित है।
इसके विपरीत, रोजगार गारंटी कार्यक्रम आम तौर पर कम उत्पादन मांग या श्रम-बचत प्रौद्योगिकी के उपयोग के संदर्भ में श्रम मांग की कमी की व्याख्या करता हैं। निजी फर्मों के बजाय, यहां सरकार से दी गई मजदूरी दर पर अतिरिक्त श्रम घंटे खरीदने और अतिरिक्त श्रम मांग उत्पन्न करने की अपेक्षा की जाती है। यदि सकल घरेलू उत्पाद पर अन्य प्रतिबंध मौजूद हैं, तो रोजगार गारंटी कार्यक्रमों के माध्यम से सरकारी व्यय में वृद्धि से देश के रोजगार में वृद्धि की उम्मीद की जा सकती है।

NOTES FROM ORGANIZERS: BAHUJAN ECONOMISTS

Aditi Priya

Bahujan Economists (BE) was started in 2020 by Aditi Priya to improve the representation of underrepresented groups in Economics and Policy circles. We strive to create a channel in these circles where an alternative to the mainstream neo-classical approach is imagined, encouraged, and implemented. BE has organized sessions on various policy-related topics for which it has invited people working on the ground and who are at the receiving end of those policies.

With the same spirit, BE has collaborated with Azim Premji University and School For Democracy to organise this workshop to make the economy and policy-related knowledge less alien and accessible in non-technical jargon-free language to people engaged with rights-based activities. BE believes that any policy concerning common people should be informed of what the people need. Demystifying Economics is an important intervention in that direction where some basic but important economic concepts are covered, the policy-making process is discussed, and an alternative way to the current policy-making approach is imagined.

माया-मुक्त अर्थशास्त्र : भारतीय अर्थव्यवस्था और संवैधानिक अधिकारों पर एक कार्यशाला

लाभुक नहीं हक़दार हैं

आयोजक :
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
बहुजन एकनॉमिस्ट्स
लोकतंत्रशाला

स्थान: अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय (बैंगलोर)
16-26 अगस्त **, 2023**

मात्रात्मक विधियां (क्वांटिटेटिव मेथड)

तमोघ्ना हालदार

केंद्रीय रुझान के पैमाने

नीचे 12 व्यक्तियों की लंबाई (सेंटीमीटर में) के आंकड़ों का एक नमूना (सैंपल) दिया गया है। हम इस डेटा का केंद्र बिंदु पता लगाने के लिए औसत (मीन), माध्यिका (मीडियन) और बहुलक (मोड) जैसे पैमानों का इस्तेमाल करेंगे।

औसत (मीन)

औसत या माध्य को जानने के लिए हम लंबाई के सभी आंकड़ों को जोड़ेंगे और व्यक्तियों की (या आंकड़ों) की संख्या से गुणा करेंगे।

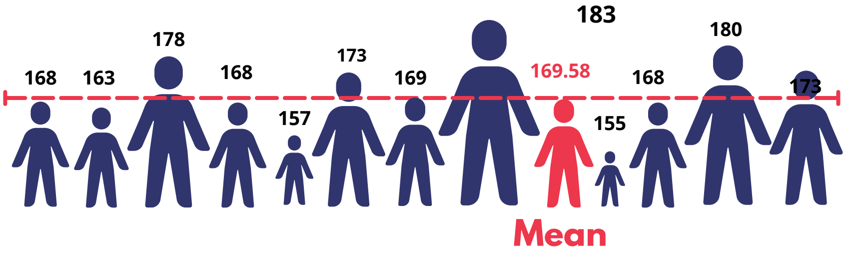

माध्यिका (मीडियन)

Median is the midpoint of the data.
अगर सभी आंकड़ों को एक कतार में जमाया जाए तो इस कतार के मध्य बिंदु (बीच के आंकड़े) को माध्यिका (मीडियन) कहा जाएगा। अगर आंकड़ों की संख्या सम (इवन) हो तो (नीचे दिया गया उदहारण 1 देखें) माध्यिका (मीडियन) के लिए बीच के दोनों आंकड़ों का औसत लिया जाता है।

माध्यिका (मीडियन) का हिसाब लगाने से पहले आंकड़ों को बढ़ते या घटते क्रम में जमाना ज़रूरी है। अगर नमूने के एक या दोनों छोर पर ऐसे आंकड़े हों जो बाकी आंकड़ों से काफी दूर हों तो उनका औसत पर तो असर पड़ता है लेकिन माध्यिका (मीडियन) और बहुलक (मोड) उनसे प्रभावित नहीं होते।

उदाहरण 1: सम (इवन) संख्या के आंकड़ें | उदाहरण 2: विषम (ऑड) संख्या के आंकड़ें

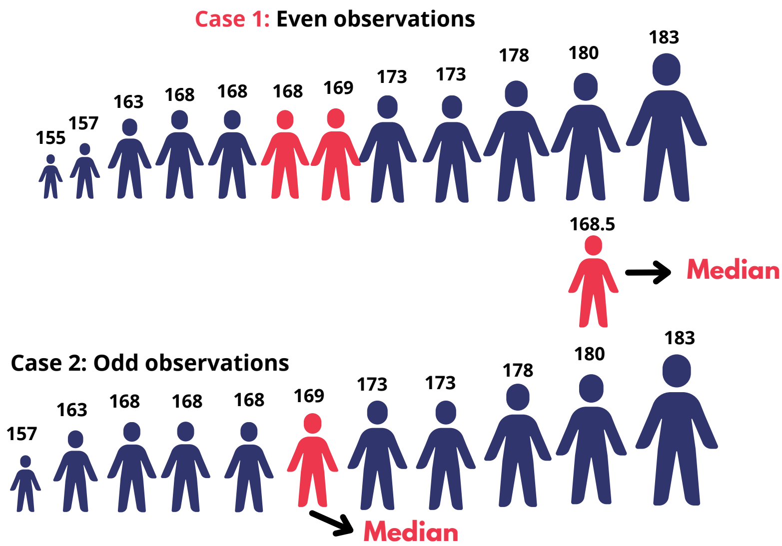

बहुलक (मोड)

बहुलक (मोड) वो आंकड़ा है जो आपके नमूने में सबसे ज़्यादा बार दिखाई देता है। एक नमूने के लिए एक से अधिक बहुलक (मोड) भी हो सकते हैं।

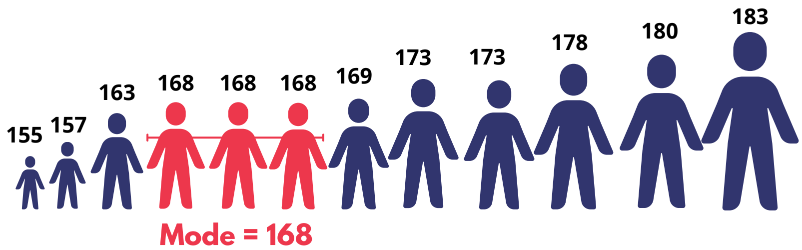

फैलाव के पैमाने

परिवर्तन सीमा (रेंज)

नमूने में सबसे लंबे और सबसे छोटे व्यक्ति की लंबाई के बीच के अंतर को परिवर्तन सीमा (रेंज) कहा जाएगा। इससे हमें नमूने में आंकड़ों के फैलाव का अंदाजा होता है।

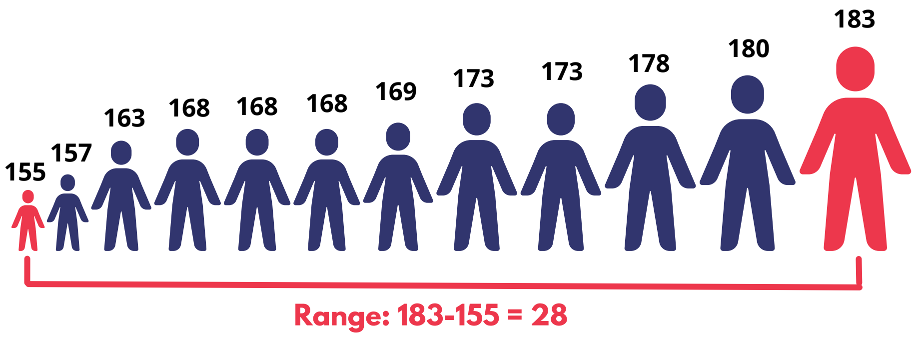

इंटर-क्वार्टाइल रेंज (अंतर-चतुर्थक परिवर्तन सीमा)

इंटर-क्वार्टाइल रेंज हमें नमूने के बीच के 50% (आधे) आकड़ों के फैलाव के बारे में बताती है। इसे मापने के लिए हम आंकड़ों को 25% (एक-चौथाई) के खंडों में बांटते हैं जिन्हें क्वार्टाइल (चतुर्थक) कहा जाता है और फिर 75% वाले आंकड़े में से 25% वाले आंकड़े को घटाते हैं।

जैसे कि हम देख सकते हैं, नमूने में बाकी आंकड़ों से दूर होने वाले आंकड़ें परिवर्तन सीमा (रेंज) को तो प्रभावित करते हैं लेकिन इंटर-क्वार्टाइल रेंज को नहीं।

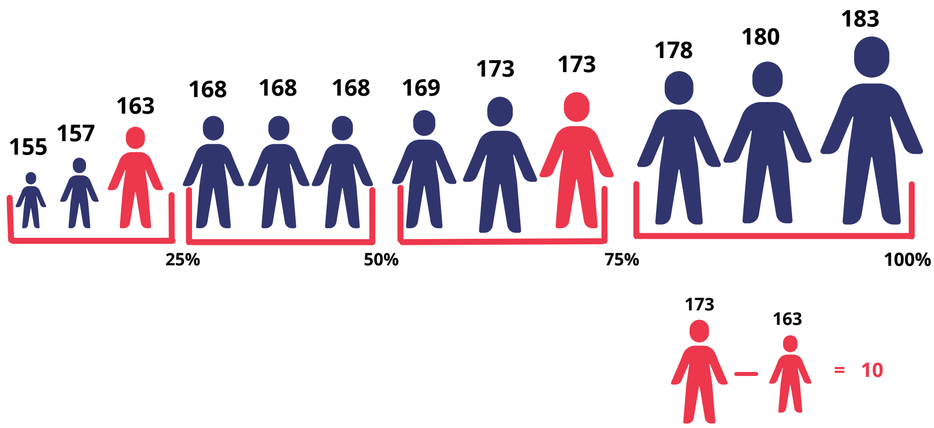

प्रसरण (वैरिअन्स)

सभी आंकड़ों में से औसत लंबाई को घटाने के बाद, उन सभी के वर्ग (स्क्वायर) को जोड़कर मिलने वाली संख्या को, व्यक्तिओं की संख्या माइनस 1 से गुणा करने पर मिलने वाली संख्या को प्रसरण (वैरिअन्स) कहा जाता है। यह हमें बताता है कि नमूने के आंकड़ें औसत लंबाई से कितने भिन्न है। प्रसरण (वैरिअन्स) की इकाई वर्ग सेंटीमीटर होती है। बाकी पैमाने से तुलना कर पाने के उद्देश्य से फैलाव को सेमी में मापने के लिए प्रसरण (वैरिअन्स) का वर्गमूल (स्क्वायर-रूट) लिया जाता है जिसे मानक विचलन (स्टैंडर्ड डेविएशन) कहा जाता है।

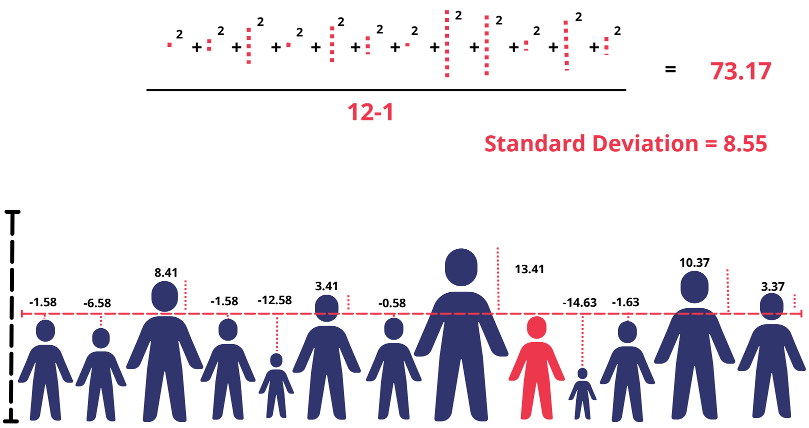

सहसंबंध (कोरिलेशन)

सहसंबंध (कोरिलेशन) को समझने के लिए हम अपने नमूने में शामिल व्यक्तियों की लंबाई (सेमी में) और उनके वज़न (किग्रा में) के आंकड़ें इस्तेमाल करेंगे।

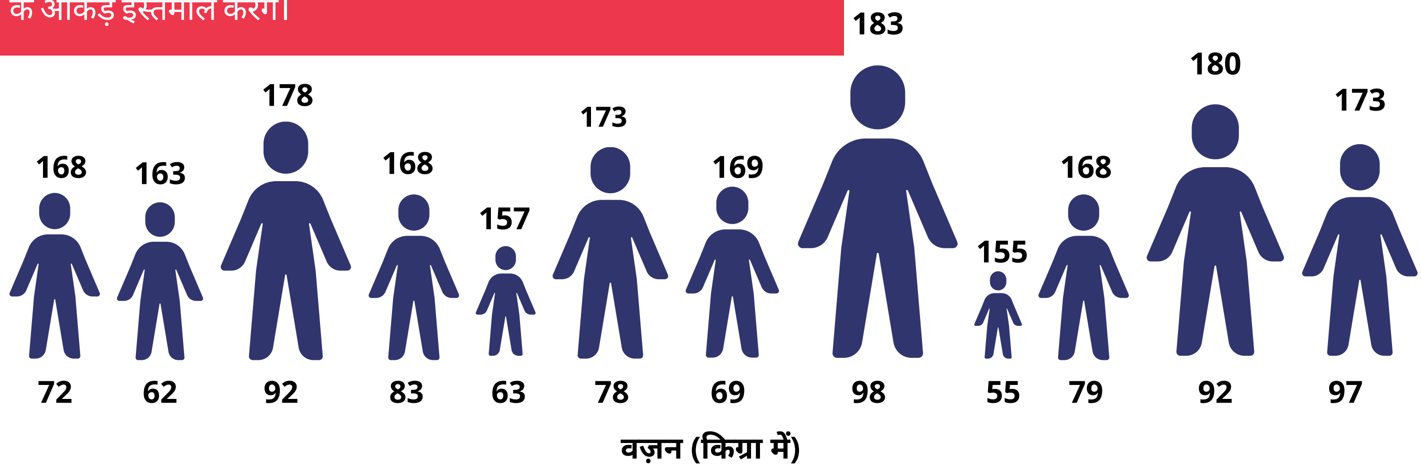

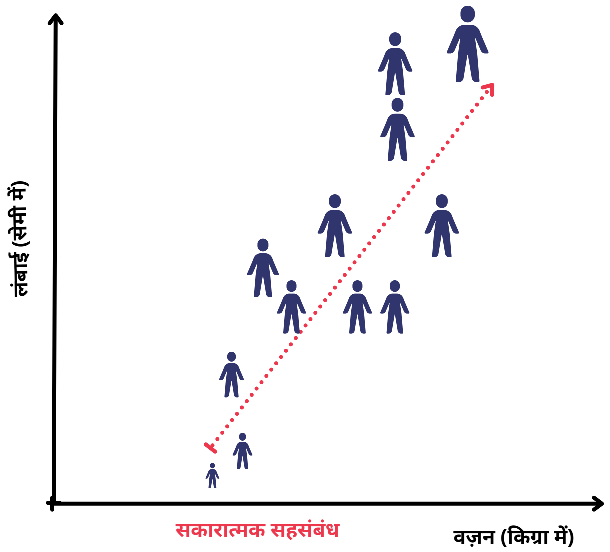

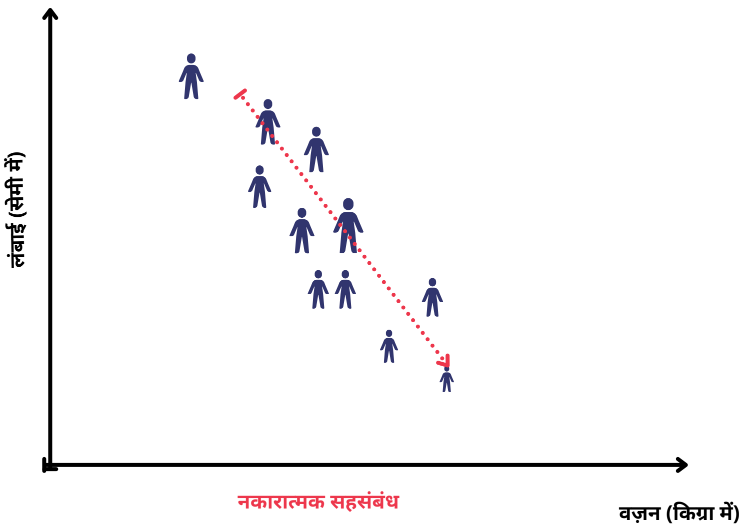

हम देखते हैं कि जो लोग ज़्यादा लंबे हैं वो ज़्यादा भारी भी हैं। यानी, लंबाई और वज़न एक ही दिशा में बदलते हैं। अगर हम इन्हें एक ग्राफ (रेखाचित्र) पर प्लॉट करते हैं तो हमें ऊपर की ओर बढ़ती हुई एक रेखा दिखाई देगी। इसे सकारात्मक सहसंबंध कहा जाता है।

इसी तरह, अन्य आयामों के बीच नकारात्मक सहसंबंध (नीचे की ओर आती हुई रेखा) हो सकता है या हो सकता है कि इनके बीच कोई भी सहसंबंध न हो (रेखा न तो साफतौर पर ऊपर जा रही हो और न ही नीचे की ओर)।

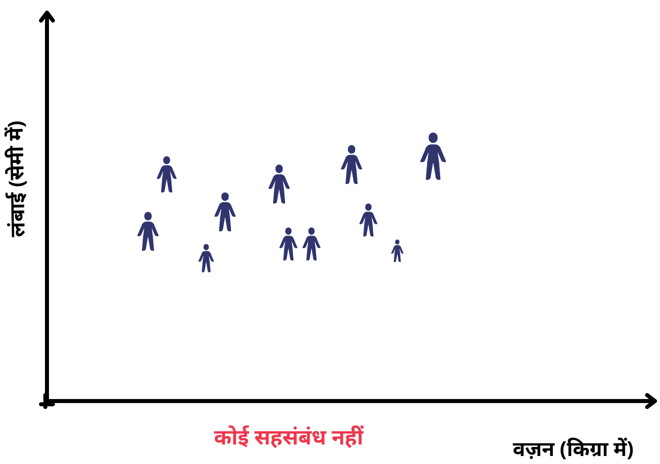

एक्सेल का उपयोग

	A	B
1	लंबाई	वज़न
2	155	55
3	157	63
4	163	62
5	168	72
6	168	83
7	168	79
8	169	69
9	173	97
10	173	78
11	178	92
12	180	92
13	183	98

औसत लंबाई	**=AVERAGE(A2:A13)**
माध्यिका (मीडियन) लंबाई	**=MEDIAN(A2:A13)**
बहुलक (मोड) लंबाई	**=MODE.SNGL(A2:A13)***
लंबाई की परिवर्तन सीमा (रेंज)	**=MAX(A2:A13)-MIN(A2:A13)**
लंबाई की इंटर-क्वार्टाइल रेंज	**=QUARTILE.INC(A2:A13,3)-QUARTILE.INC(A2:A13,1)****
लंबाई का प्रसरण (वैरिअन्स)	**=VAR.S(A2:A13)*****
लंबाई का मानक विचलन (स्टैंडर्ड डेविएशन)	**=STDEV.S(A2:A13)*****
सहसंबंध	**=CORREL(A2:A13,B2:B13)**

ध्यान दें:

*MODE.SNGL() का इस्तेमाल करने पर एक से ज़्यादा बहुलक (मोड) होने पर सबसे छोटा बहुलक (मोड) मिलता है। सभी बहुलक (मोड) हासिल करने के लिए MODE.MULT() का इस्तेमाल किया जा सकता है।

**QUARTILE.INC() का इस्तेमाल करने पर आंकड़ों में माध्यिका (मीडियन) शामिल करके क्वार्टाइल (चतुर्थक) दिए जाते हैं। आंकड़ों में माध्यिका (मीडियन) को शामिल किए बिना क्वार्टाइल (चतुर्थक) हासिल करने के लिए QUARTILE.EXC() का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। दोनों ही पैमानों को उपयुक्त माना जाता है।

**QUARTILE.INC को इनपुट के रूप में दिए जाने वाले आंकड़ों में 3 और 1 का अर्थ क्रमशः 75% और 25% वाले क्वार्टाइल (चतुर्थक) से है।

***VAR.S और STDEV.S के ज़रिए हम नमूने का क्रमशः प्रसरण (वैरिअन्स) और मानक विचलन (स्टैंडर्ड डेविएशन) हासिल कर सकते हैं। पूरी आबादी (जिससे नमूना लिया गया है) के प्रसरण (वैरिअन्स) और मानक विचलन (स्टैंडर्ड डेविएशन) के लिए VAR.P और STDEV.P का इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

ग्राफ (रेखाचित्र) की कला!

ग्राफ के ज़रिए हम अपने आंकड़ों को संक्षिप्त, आसानी से समझ आने वाले और रोचक तरीके से प्रस्तुत कर सकते हैं।

प्र: वेरिएबल (चर वस्तु) क्या होता है?

उ: ऐसी चीज़ें जो बदलती हैं!

प्र: कोई उदाहरण?

उ: लंबाई (हर व्यक्ति के लिए अलग-अलग होती है), तेल की कीमत (समय के साथ बदलती है) और ऐसे कई और...

प्र: लेकिन क्या ऐसी भी कोई चीज़ है जो कभी भी नहीं बदलती?

उ: हाँ, रोशनी की गति!

सामान्य बार प्लॉट

सीधी खड़ी समकोणीय इमारतों के ज़रिए वेरिएबल की गिनती/संख्या को दर्शाया जाता है।

प्र: इस ग्राफ के अनुसार हमारे नमूने में कुल कितनी महिला किसान हैं?

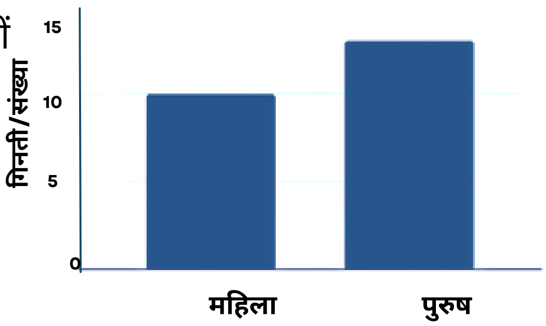

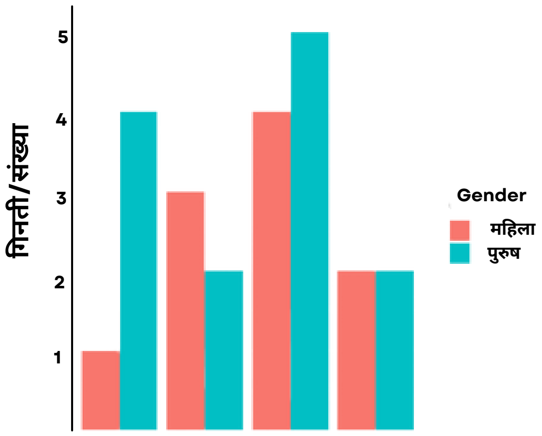

मल्टीपल (एक से ज़्यादा) बार प्लॉट

विभिन्न समूहों के बीच तुलना करने के लिए। हर समूह के लिए एक अलग इमारत होती है।

प्र: उत्तरी क्षेत्र में कितने पुरुष किसान हैं?

स्टैक्ड (एक के ऊपर एक) बार प्लॉट

विभिन्न समूहों के बीच तुलना करने के लिए। हर समूह की संख्या वाली इमारत को एक के ऊपर एक चढ़ाकर दिखाया जाता है।

प्र: दक्षिण में छोटी जोत वाले किसानों की संख्या कितनी है?

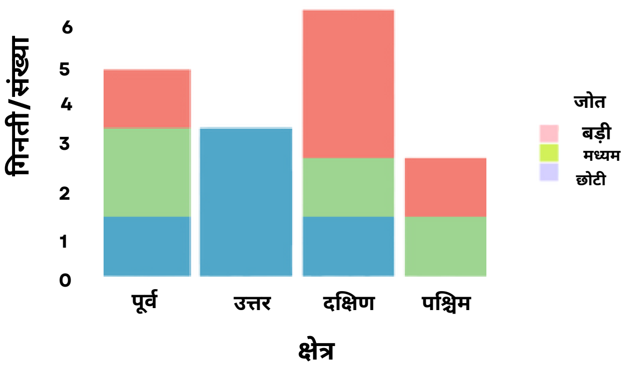

ग्राफ (रेखाचित्र) की कला!

ग्राफ के ज़रिए हम अपने आंकड़ों को संक्षिप्त, आसानी से समझ आने वाले और रोचक तरीके से प्रस्तुत कर सकते हैं।

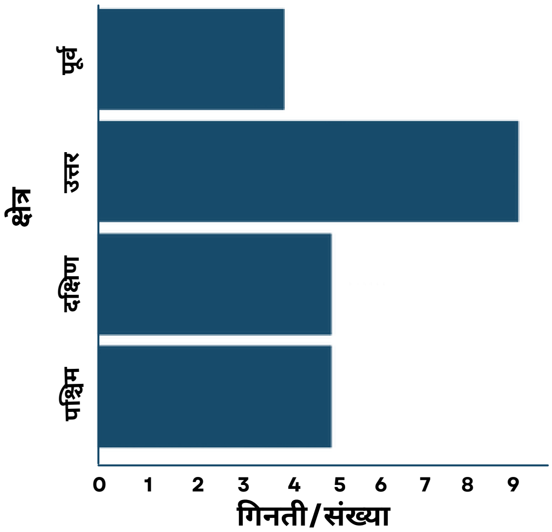

हॉरिज़ॉन्टल बार प्लॉट

गिनती/संख्या को लेटी हुई इमारतों के ज़रिए दिखाया जाता है। स्थानिक/भौगोलिक आंकड़ों के लिए उपयुक्त।
प्र: कितने किसान पूर्वी क्षेत्र से हैं?

पाई चार्ट

एक गोलाकार, रोटी-नुमा चार्ट जिसके ज़रिए अनुपात/प्रतिशत के आंकड़ें दर्शाए जाते हैं।
प्र: कितने प्रतिशत किसान पश्चिमी क्षेत्र से हैं?

प्र: कंटीन्यूअस वेरिएबल (सतत चर) क्या होता है?
उ: ऐसा वेरिएबल (चर) जो बदल कर कोई भी संख्या ले सकता है - जैसे, किसी व्यक्ति का वज़न, जो 67.33 किलो भी हो सकता है। ध्यान दें कि यह डिस्क्रीट वेरिएबल (असतत चर) से अलग होता है, जैसे किसी देश में रहने वाले लोगों की संख्या!

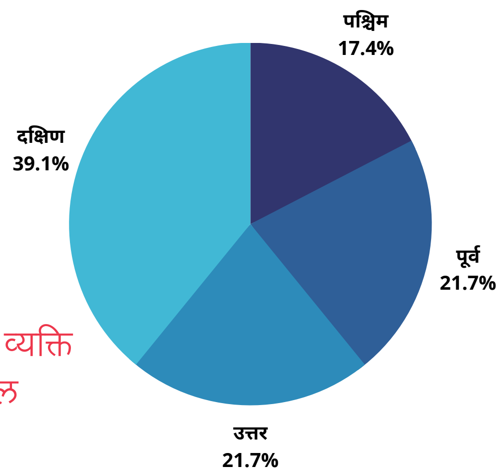

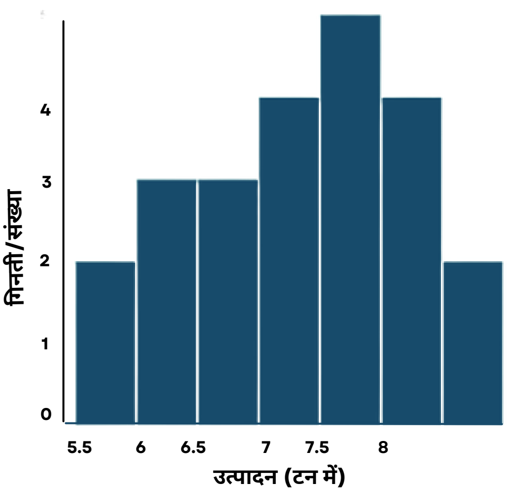

हिस्टोग्राम

कंटीन्यूअस वेरिएबल (सतत चर) के आंकड़ों की बारंबारता (दी गई संख्या नमूने में कितनी बार आती है) को दर्शाने के लिए हिस्टोग्राम का इस्तेमाल किया जाता है।
प्र: कितने किसानों का उत्पादन 6 टन से कम है?

ग्राफ (रेखाचित्र) की कला!

ग्राफ के ज़रिए हम अपने आंकड़ों को संक्षिप्त, आसानी से समझ आने वाले और रोचक तरीके से प्रस्तुत कर सकते हैं।

OTHER PLOTS

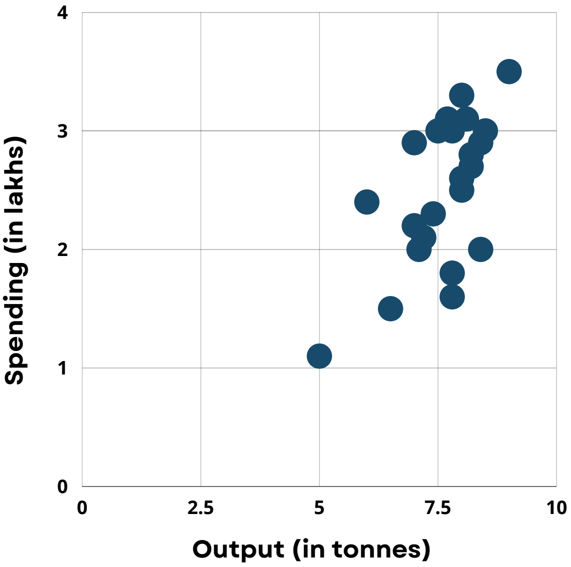

स्कैटर प्लॉट

आंकड़ों को छितरे हुए बिंदुओं के रूप में प्लॉट किया जाता है। आमतौर पर दो वेरिएबल (चरों) के लिए इस्तेमाल किया जाता है।
प्र: 1 लाख रुपये खर्च करने वाले किसान का उत्पादन कितना है?

लाइन प्लॉट

सभी बिंदुओं को जोड़ने वाली रेखा वाला यह ग्राफ रुझानों को समझने में मदद करता है, खासतौर पर समय के साथ बदलने वाले आंकड़ों के लिए (जिन्हें टाइम-सीरीज डेटा भी कहा जाता है)। अगर आंकड़ों के रुझानों को लगभग एक सीधी रेखा से दिखाया जा सके तो इनके बीच का संबंध रेखाकार (लीनियर) माना जाएगा, वरना इसे गैर-रेखाकार (नॉन-लीनियर) माना जाएगा।
प्र: वर्ष 2007 में औसत पैदावार कितनी थी?

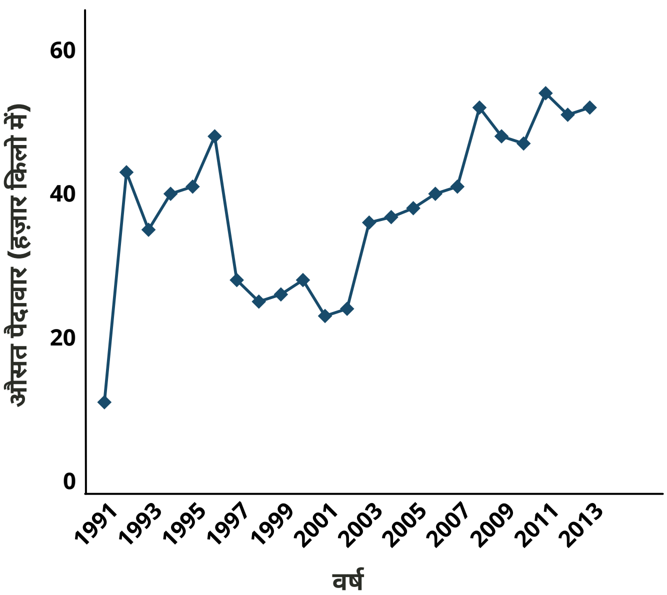

ग्राफ (रेखाचित्र) की कला!

ग्राफ के ज़रिए हम अपने आंकड़ों को संक्षिप्त, आसानी से समझ आने वाले और रोचक तरीके से प्रस्तुत कर सकते हैं।

OTHER PLOTS

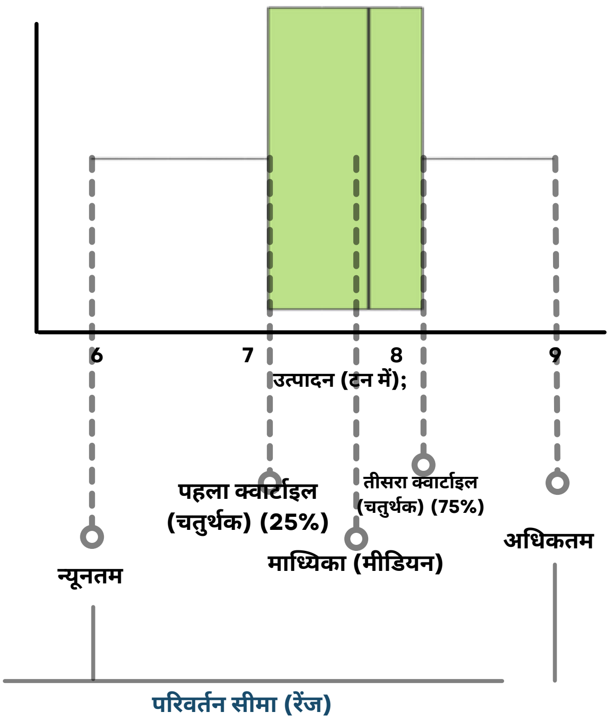

बॉक्स प्लॉट

बॉक्स (डिब्बे) के बाहर वाले सभी बिंदु आउटलायर, यानी, अपवाद होते हैं।

चार्ट बनाने के लिए एक्सेल का उपयोग

कदम 1:

एक्सेल शीट में आंकड़ों को सेलेक्ट करें (चुनें)।

कदम 2:

मेनू बार में से 'इन्सर्ट' विकल्प को चुनें।

कदम 3:

आपको अलग-अलग प्रकार के चार्ट के आइकॉन दिखाई देंगे। अपने आकंड़ों के अनुसार, सही चार्ट के विकल्प का चुनाव करें।

अगर आपको सही चार्ट चुनने में मुश्किल हो तो 'रेकमेंडेड चार्ट्स' विकल्प का उपयोग करें।

NATIONAL FAMILY HEALTH SURVEY (NFHS)

The National Family Health Survey (NFHS) is a large-scale, multi-round survey conducted in a representative sample of households throughout India.

Census vs Survey

Indicators	Census	Survey
Data collection		
Conducted by		
Frequency		
Reliability and accuracy		
Time taken		
Cost		

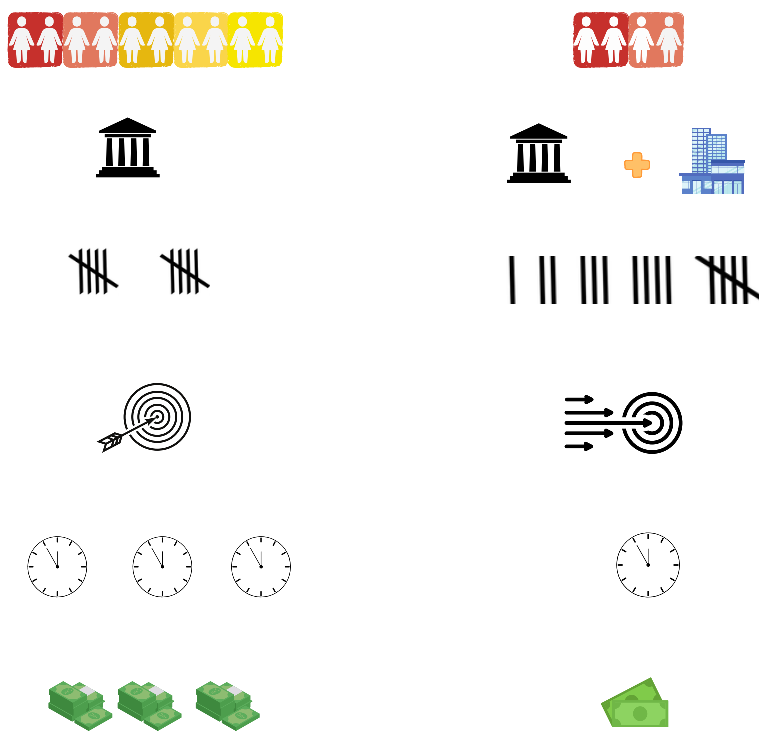

NFHS Rounds: Timeline

Factsheet: National and State Level (only Key Indicators)

1992-1993	NFHS – 1
1998-1999	NFHS – 2
2005-2006	NFHS – 3

Factsheet: National, State and District Level

2015-2016	NFHS – 4
2019-2020	NFHS – 5

Relevance of NFHS

Global Origin

- NFHS is part of the global demographic and health surveys (DHS) program started in the 1980s and was institutionalized by USAID in 90 countries.
- The DHS Program works with governments to collect and share key information about people, their health and their health systems.

Reliability

- Economists and policy framers from all over the world use the same standardized survey to take policy decisions regarding health and demographics.

Strength

- It collects information on a wide range of variables such as health and nutrition, women empowerment, child vaccination, domestic violence, alcohol, and tobacco consumption.
- The data can be disaggregated to the level of districts.
- It helps to track improvements (or deterioration) over time.

Limitations

- On the successive rounds, the number of questions are varying.
- Men were not interviewed in NFHS round 1 and 2. So we may not be able to compare some variables over time

We can only attempt to solve social problems if we know their extent, dimensions and depth.

HOW TO ACCESS THE NFHS FACTSHEETS

01 Open google and type **NFHS Factsheets** or type the link: **http://rchiips.org/nfhs/**

02 Click or move the mouse on any of the **NFHS rounds listed on the left side** of the main page.

03 Click or move the mouse to **Publication.**

04 Once you click on publications, you will find the **following options** referred in the table. Click to the **relevant file for use**

ITEM	NFHS
Report	1
Report and Factsheet – State	2
Report and Factsheet – State and District	3
Factsheet – National, State and District	4 & 5

BROAD ECONOMIC FACTORS THAT ONE CAN LEARN FROM NFHS REPORTS

NFHS

- **DEMOGRAPHY**
  - Sex Ratio
  - Population
  - Sanitation
  - Electricity
- **HEALTH**
  - Anthropometric measures
  - Vaccination
  - HIV/AIDS
  - Child Nutrition
- **GENDER**
  - Tobacco and Alcohol use
  - Asset ownership
  - Gender based violence
  - Maternity and Delivery Care
- **EDUCATION**
  - Literacy
  - >10 years of schooling
  - Level of Education
  - Internet use and access

Note: Information on employment, gender attitudes, wealth index, caste and religion are not available in the fact sheets but are available in the raw data.

DEMYSTIFYING ECONOMICS: A WORKSHOP ON INDIAN ECONOMY AND CONSTITUTIONAL RIGHTS

RIGHT HOLDERS. NOT BENEFICIARIES

ORGANISERS:
AZIM PREMJI UNIVERSITY
BAHUJAN ECONOMISTS
SCHOOL FOR DEMOCRACY

VENUE: AZIM PREMJI UNIVERSITY (BANGALORE)
AUGUST 16-26, 2023

दलित बहुजन आदिवासी अधिकार

दोंथा प्रशांत

भूमिका:
अगर दलित बहुजन आदिवासी अधिकारों की ऐतिहासिक जड़ों की अनदेखी करते हुए उन्हें सिर्फ संविधान के चश्मे से ही देखा जाए तो न तो उनके सही महत्व को ही और न ही उन्हें ज़मीनी स्तर पर लागू करने की प्रक्रिया को ठीक से समझा जा सकता है। भारत के संविधान में मौलिक अधिकारों को केंद्रीय महत्व दिया गया है और उन्हें संविधान के ढांचे का बुनियादी हिस्सा माना गया है, इसलिए उनमें संशोधन नहीं किया जा सकता है।
राज्य नीति के जिन निदेशक सिद्धांतों को दमनित समुदायों के हितों की रक्षा के लिए संविधान में जगह दी गई थी, उन्हें और उन्हें लागू करने की प्रक्रियाओं को अक्सर इस बिनाह पर खारिज कर दिया गया कि यह मौलिक सिद्धांतों के आड़े आते हैं। इस पृष्ठभूमि में, मौलिक अधिकारों के दायरे और सीमाओं के साथ-साथ न्यायपालिका, सरकार और प्रशासन द्वारा की गई उनकी व्याख्या को समझने के लिए, आज़ादी से पहले उभरने वाले आंदोलनों, खासतौर पर जाति-विरोधी और आदिवासी आंदोलनों के इतिहास की ओर एक नज़र डालना बहुत ज़रूरी हो जाता है।

मौलिक अधिकार:

- समानता का अधिकार, जिसमें कानून के समक्ष समानता; धर्म, नस्ल, जाति, लिंग और जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव पर पाबंदी और रोज़गार के समान अवसर शामिल है।
- वाक्-स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार; सम्मिलित होने, संघ या संगठन बनाने की स्वतंत्रता, भारत में कहीं भी आने-जाने, रहने और किसी भी पेशे या कारोबार में शामिल होने की स्वतंत्रता का अधिकार (इनमें से कुछ अधिकार राज्य की सुरक्षा, अन्य देशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों, कानून व्यवस्था, भद्रता या नैतिकता के अधीन हैं)।
- शोषण के विरुद्ध अधिकार - सभी प्रकार की जबरन मज़दूरी, बाल मज़दूरी और मानव तस्करी पर पाबंदी।
- अंत:करण की स्वतंत्रता और मुक्त रूप से धर्म को मानने, उसका आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता का अधिकार।
- नागरिकों के किसी भी वर्ग का अपनी संस्कृति, भाषा या लिपि के संरक्षण का अधिकार और अल्पसंख्यकों का अपनी पसंद के शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना करने और उन्हें संचालित करने का अधिकार; और
- मौलिक अधिकारों को लागू करने के लिए संवैधानिक उपायों का अधिकार।

संविधान में शामिल किए गए मौलिक अधिकार एक विशेष ऐतिहासिक संदर्भ से निकले हैं: संविधान से पहले पूरे देश में इन अधिकारों का अभाव था, और मतदान, संपत्ति, प्रशासन और स्वतंत्रता के अधिकार सभी व्यक्तियों को समान रूप से हासिल होने के बजाय, कुछ ही लोगों तक सीमित थे।
लेकिन संविधान को अपनाए जाने के बाद, न्यायपालिका द्वारा सुनाए गए निर्णयों में, उदाहरण के तौर पर मद्रास राज्य बनाम चम्पकम दोराईराजन के मामले में, गैर-बराबरी को दूर करने के लिए दमनित समुदायों के लिए किए गए विशेष प्रावधानों को समानता के अधिकार के विरुद्ध ठहराया गया और उन्हें रद्द कर दिया गया। इसी तरह, केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य के मामले में, संविधान के भाग-III, यानी मौलिक अधिकारों को संविधान के बुनियादी ढांचे का हिस्सा माना गया और उनके संशोधन को वर्जित करार दिया गया। लेकिन, इस भाग में शामिल किए गए संपत्ति के अधिकार के संशोधन को निषेध किया जाना, संपत्ति के असमान वितरण के लंबे इतिहास को नज़रअंदाज़ करना था, जिसमें शोषित समुदायों की अपनी संपत्ति से बेदखली, प्रभुत्वशाली समुदायों का भूमि पर दबदबा, इत्यादि शामिल है। यही नहीं, इस निर्णय के ज़रिए, भूमि पर

मेहनतकश वर्ग के मालिकाना हक़ के लिए आज़ादी से पहले लड़े गए सभी आंदलोनो को एक तरह से नकार दिया गया। संविधान सभा में इन अधिकारों पर व्यापक संदर्भ में चर्चा की गई थी, लेकिन न्यायपालिका द्वारा इन अधिकारों पर सुनाए गए निर्णयों में संविधान सभा की समितियों की राय या संविधान सभा के बहुमत को कोई जगह नहीं दी गई। इस स्थिति में, मौलिक अधिकारों को समझने की प्रक्रिया में, शब्दकोश में दिए गए उनके अर्थों के बजाय उनके पीछे के ऐतिहासिक आंदोलनों को समझना ज़्यादा ज़रूरी है।

शोषण और संघर्ष के आईने में अधिकार

18वीं सदी के मध्य में, सावित्रीबाई फुले और ज्योतिबा फुले द्वारा समाज के सभी वर्गों के लिए शिक्षा उपलब्ध कराने के प्रयास उस समय की प्रथा के बिलकुल विपरीत थे, जिसके तहत शिक्षा को कुछ ही सामाजिक समूहों तक सीमित रखा जाता था। मुक्ता साल्वे को सावित्रीबाई फुले का मार्गदर्शन मिला, जिसके चलते वो 19वीं सदी के मध्य में, मांग और महार समुदाय की मौजूदा स्थिति को सार्वजनिक रूप से उजागर कर पाई।

वर्ष 1855 में मुक्ता साल्वे द्वारा लिखे गए निबंध में दमनित वर्ग की शोचनीय स्थिति, बुनियादी मानव गरिमा और मानवाधिकारों के अभाव को रेखांकित किया गया।

वर्ष 1893 में केरल में अय्यंकाली के नेतृत्व में लड़ा गया आंदोलन, एक विलुवैंदी (बैलगाड़ी) यात्रा से शुरू हुए जो उन गलियों से निकाली गई जिनसे गुज़रना दलितों के लिए तब तक वर्जित था, और इस तरह सार्वजनिक स्थानों में बराबरी की मुहीम शुरू हुई। इसके बाद, वर्ष 1907 में, अपने बच्चों के स्कूल में दाखिले के लिए खेत मज़दूरों द्वारा की गई व्यापक हड़ताल ने शिक्षा व्यवस्था में मौजूद गैर-बराबरी और इस असमानता के खिलाफ प्रतिरोध की शक्ति को उजागर किया।

संविधान सभा की संपादक (ड्राफ्टिंग) समिति के अध्यक्ष, डॉ. बी.आर.अंबेडकर ने खुद इस तरह के कई आंदोलनों का नेतृत्व किया था, जिसमें खोती (ज़मींदार) व्यवस्था के खिलाफ किसानों और खेत मज़दूरों के आंदोलन, जीवन और पीने के पानी के अधिकार के लिए किया गया महाड सत्याग्रह, हाशिए के समुदायों के लिए राजनीतिक प्रतिनिधित्व की लड़ाई, और पीपल'स एजुकेशन सोसाइटी की स्थापना कइ ज़रिए सभी के शिक्षा के अधिकार की मुहीम भी शामिल थी, जिसके ज़रिए उन्होंने जाति-आधारित असमानता पर हमला बोला।

स्वतंत्रता-पूर्व के भूमि-अधिकारों के आंदोलनों की दिशा के विपरीत, स्वतंत्रता के बाद न्यायपालिका द्वारा सुनाए गए फैसलों में ज़मींदारों का पक्ष लिया गया। इन संघर्षों के इतिहास की अनदेखी करते हुए, राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों को मौलिक अधिकारों के नीचे दबा दिया गया और भूमि के वितरण में मौजूद गैर-बराबरी को दूर करने की कोशिशों में रोड़े अटकाए गए। बंगाल में, ज़मींदारों की हिमायत करने वाली एक पत्रिका में ज़मींदारी-विरोधी आंदोलनों की इन शब्दों में व्याख्या की गई थी:

"पूरा माहौल ज़मींदार-विरोधी भावनाओं से सुलग रहा था, जिसका ज्वलंत उदहारण कुछ तेज़तर्रार नेताओं द्वारा दिए गए आक्रामक भाषणों में देखा जा सकता था। समय-समय पर पंडाल 'जमींदार मुर्दाबाद, पूंजीवादी मुर्दाबाद' के कर्कश नारों से गूंज उठता था। ज़मींदारों के प्रतिनिधियों के लिए माहौल काफी गरमा गया था, और खुद ज़मींदारों के बारे में तो क्या ही कहें, अगर उनमें से कोई भी खुद वहां जाने की हिम्मत करते तो उन्हें काफी फजीती का सामना करना पड़ता।" (धर, 1939, पृ 483)

"Did they not consider us even lower than donkeys during the rule of Bajirao Peshwa? ...Under Bajirao's rule, if any mang or mahar happened to pass in front of a gymnasium, they would cut off his head and play 'bat and ball' with their swords as bats and his head as a ball, on the grounds. When we were punished for even passing through their doors, where was the question of getting education, getting freedom to learn?

When any mang or mahar would learn somehow to read or write, and if Bajirao came to know about this, he would say: education of a mang or mahar amounts to taking away a brahman's job. He used to say, "How dare they get educated? Do these untouchables expect the brahman to hand over their official duties to them and move around with their shaving kits, shaving the heads of widows?" With such remarks he would punish them."

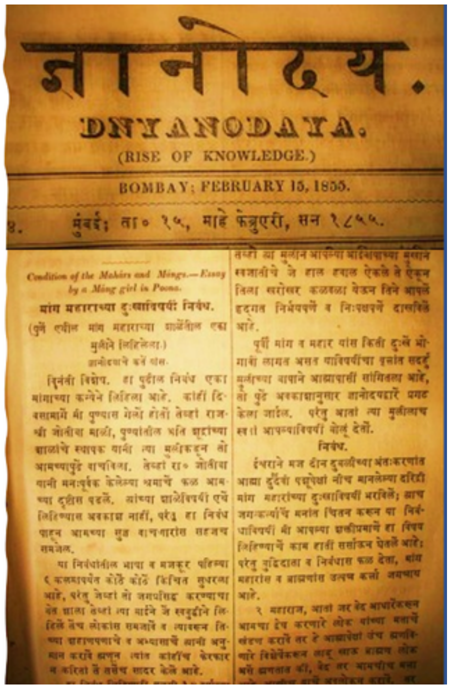
ज्ञानोदय.
DNYANODAYA.
(RISE OF KNOWLEDGE.)
BOMBAY; FEBRUARY 15, 1855.
मुंबई; ता० १५, माहे फेब्रुएरी, सन १८५५.

Condition of the Mahárs and Mángs.—Essay by a Máng girl in Poona.

मांग महाराच्या दुःखाविषयीं निबंध.

निबंध.

सामंती ज़मींदारों के खिलाफ देश भर में आंदोलनों की व्यापक लहार फ़ैल गई थी। तेलंगाना के सशस्त्र आंदोलन और बंगाल के तेभागा आंदोलन के बारे में हर जगह चर्चा हो रही थी। लेकिन जाति व्यवस्था की वजह से भूमि अधिकारों से वंचित किए जाने के खिलाफ लड़े जा रहे स्थानीय संघर्षों की अपनी ही एक अलग धारा थी, जिसकी कहानी आने वाले समय में किए गए कई ऐतिहासिक अध्ययनों में बयां की गई।

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान, मेहनतकश वर्ग का बड़े पैमाने पर समर्थन पाने के लिए ज़मींदारी व्यवस्था के खिलाफ कड़ी भाषा का प्रयोग किया गया (पॉलिटिकस 1939, हेरिंग 1983)। लेकिन, स्वतंत्रता के बाद, शुरुआती वर्षों में भारत की न्यायपालिका द्वारा सुनाए गए फैसलों में समता की दृष्टि से संपत्ति के न्यायसम्मत पुनर्वितरण के बजाय संपत्ति के वैयक्तिक अधिकारों को ज़्यादा प्राथमिकता दी गई।

इस प्रस्तुति (प्रेजेंटेशन) में, अधिकारों के लिए लड़े गए जाति-विरोधी और आदिवासी आंदोलनों को केंद्र में रखकर, बहुसंख्यक समुदायों के अधिकारों के बदले प्रभुत्वशाली समुदायों के अधिकारों को प्राथमिकता दिए जाने के इस दौर पर चर्चा की जाएगी। इसमें इन आंदोलनों के इतिहास और उनकी मौजूदा स्थिति पर भी चर्चा की जाएगी।

श्रम अधिकार, महिला अधिकार

सृष्टि यादव

अधिशेष-आधारित नजरिया: अधिशेष (यानी बकाया या बचे हुए मूल्य) के चश्मे से अर्थव्यवस्था और समाज का अध्ययन: अधिशेष किस तरह पैदा होता है, इसे कौन पैदा करता है, इस पर किसका नियंत्रण होता है और अलग-अलग समूहों (या वर्गों) के बीच इसका बंटवारा किस तरह से किया जाता है?

वर्ग: ऐसे लोगों का समूह जिनका आर्थिक उत्पादन और वितरण प्रक्रिया के साथ एक-समान संबंध है:

- मेहनतकश वर्ग: ऐसे लोग जो मज़दूरी पर निर्भर रहते हैं और आमतौर पर उत्पादक संसाधनों से वंचित होते हैं। वे औपचारिक क्षेत्र में हो सकते हैं (जैसे आईटी (सूचना प्रौद्योगिकी) कंपनियों में), अनौपचारिक क्षेत्र में हो सकते हैं (जैसे छोटी दूकान में काम करने वाला सहायक मज़दूर या घरेलु कामगार) या स्वयं-रोज़गार पर निर्भर हो सकते हैं (जैसे सब्जी बेचने वाले या ऑटो-चालक)।
- नियंत्रक वर्ग: उत्पादक संसाधनों पर मालिकाना हक़ रखने वाले और उनमें निवेश करने वाले व्यक्ति (जैसे, पूंजीपति या उद्योगपति, ज़मींदार, साहूकार), जो यह तय करते हैं कि इन संसाधनों का इस्तेमाल किस तरह किया जाएगा, किस वस्तु या सेवा का उत्पादन किया जाएगा और पैदा किए गए अधिशेष को किस तरह से इस्तेमाल किया जाएगा।

सकल उत्पाद: किसी उत्पादन प्रक्रिया के ज़रिए पैदा किए गए कुल उत्पाद का मूल्य। इसमें कच्चे माल की लागत; मशीनों, औज़ारों और उपकरणों के इस्तेमाल के कारण उनेक मूल्य में होने वाली गिरावट (विमूल्यन); मज़दूरों को दी गई मज़दूरी और नियंत्रक वर्ग द्वारा अपने पास रखा गया अधिशेष/बकाया मूल्य शामिल होता है।

अशुद्ध उत्पाद: सकल उत्पाद - (कच्चे माल की लागत + मशीनों का विमूल्यन),
यानी, शुद्ध उत्पाद = मज़दूरी + अधिशेष

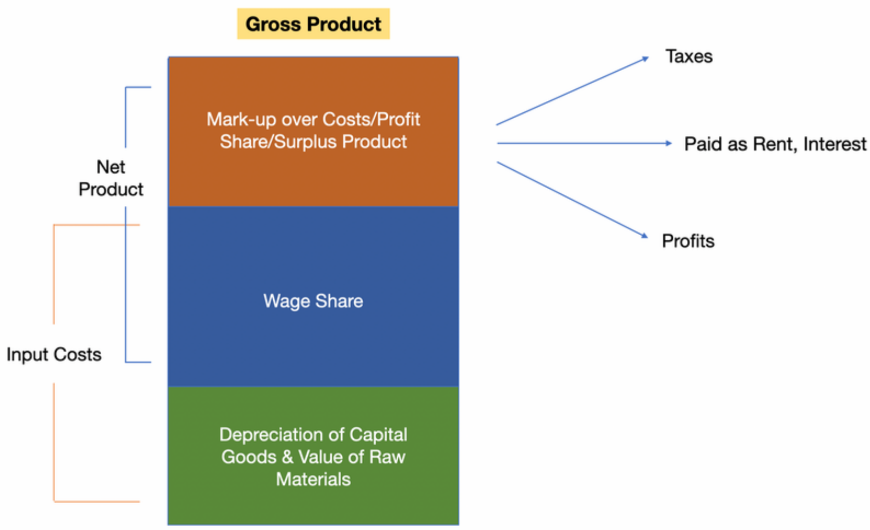

रेखाचित्र 1

वर्ग संघर्ष: मेहनतकश वर्ग और नियंत्रक वर्ग के बीच शुद्ध उत्पाद के बंटवारे को लेकर होने वाला संघर्ष। मेहनतकश वर्ग को कितना दिया जाएगा और नियंत्रक वर्ग के हिस्से कितना आएगा?

- नियंत्रक वर्ग कोशिश करता है कि मेहनतकश वर्ग को कम से कम हिस्सा दिया जाए। अधिशेष पर नियंत्रक वर्ग का कानूनी नियंत्रण होता है।
- मेहनतकश वर्ग शुद्ध उत्पाद में अपने हिस्से को बढ़ाने की कोशिश करता है, जिसके लिए मज़दूर सामूहिक कार्रवाई का सहारा लेते हैं - संगठन बनाना, न्यूनतम मज़दूरी की मांग करना, मज़दूरी बढ़ाए जाने की मांग करना, सामाजिक सुरक्षा (पेंशन, स्वास्थ्य सेवा) की मांग करना, बेहतर कामकाजी परिस्थितियों की मांग करना, काम के कम घंटों/छोटे सप्ताह की मांग करना, इत्यादि।
- नियंत्रक वर्ग शुद्ध उत्पाद में मेहनतकश वर्ग के हिस्से को घटाने के लिए कानूनी पैतरों (जैसे, हड़ताल पर बैठे मज़दूरों की ताला-बंदी) और

मज़दूरों के बीच फूट डालने (जाति, लिंग, नस्ल, क्षेत्रीय पहचान जैसे अंतरों का इस्तेमाल करके मज़दूरों को बांटना; उत्पादन को ऐसे इलाकों में ले जाना जहां मज़दूरी की लागत कम हो, इत्यादि) जैसी तरकीबों का इस्तेमाल करता है।

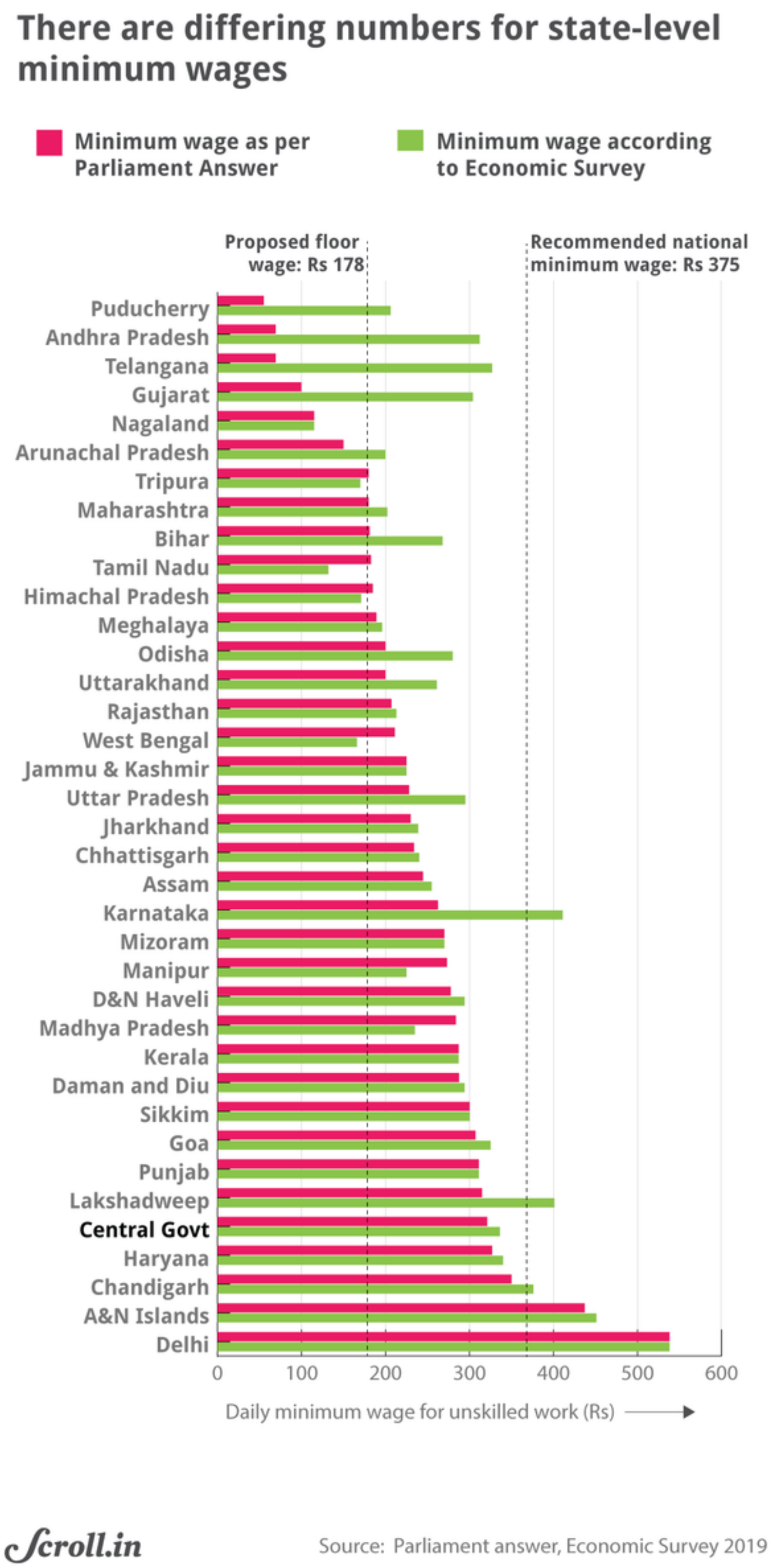

रेखाचित्र 2

महिला अधिकार

मज़दूरी से किन ज़रूरतों की पूर्ति होनी चाहिए?

- आदर्श रूप से, मज़दूरी से मज़दूर और उनके परिवार के जीवन-निर्वाह से जुड़ी सभी ज़रूरतों की पूर्ती होनी चाहिए। मज़दूरी इतनी होना चाहिए ताकि मज़दूर एक दिन से दूसरे दिन (और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी) अपने स्वास्थ्य और उतप्दाकता के स्तर को बनाए रख सके।
- लेकिन शुद्ध उत्पाद का एक बड़ा हिस्सा परिवार के भीतर होने वाले सामाजिक और शारीरिक पुनरुत्पादन की प्रक्रिया से निकालता है (जैसे, खाना बनाना, बच्चों की देखभाल, इत्यादि) जिसमें इस्तेमाल होने वाले (अक्सर महिलाओं के) श्रम के लिए कोई भुगतान नहीं किया जाता।

रेखाचित्र 3

सामाजिक पुनरुत्पादन: मानव श्रम के पुनरुत्पादन में लगने वाली मेहनत अक्सर परिवार की महिलाओं द्वारा की जाती है। कमाई से खाद्य सामग्री तो खरीदी जा सकती हैं लेकिन खाना पकाने में लगने वाली मेहनत ही उसे खाने लायक बनाती है। अपनी कमाई से मज़दूर भाड़े पर घर तो ले सकता है लेकिन साफ-सफाई में लगने वाली मेहनत के बिना यह घर रहने लायक नहीं बन पाता। अपनी कमाई से मज़दूर अपने बच्चों के लिए कपड़े खरीद सकता है और स्कूल की फीस भर सकता है लेकिन परवरिश के बिना बच्चों के लिए समाज में अपनी जगह बनाना मुमकिन नहीं होता। सामाजिक पुनरुत्पादन का अर्थ उन सभी गतिविधियों से है (जैसे खाना पकाना, बर्तन मांजना, कपड़े धोना, बच्चों और बुजुर्गों की देखभाल करना, इत्यादि) जिनके ज़रिए समाज में मेहनतकश वर्ग का वजूद बना रहता है।

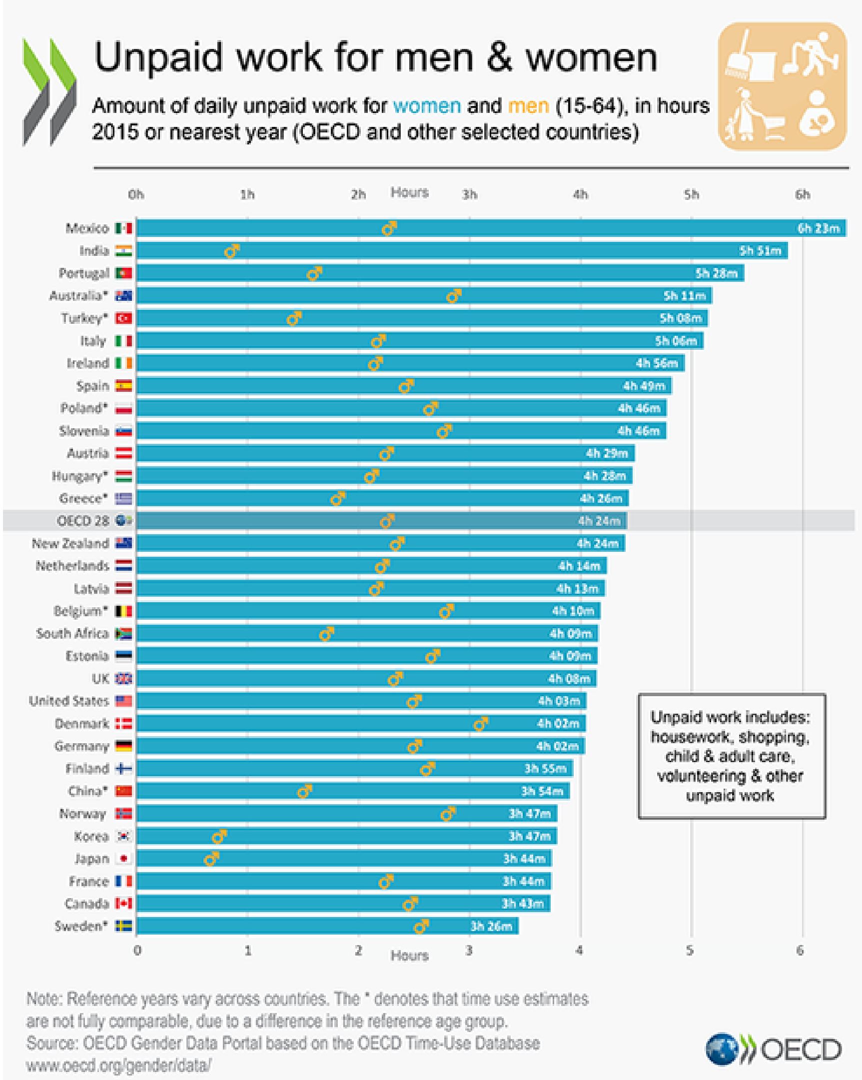

दोहरा बोझ: महिलाएं जब बाहर जाकर वेतन-सहित मज़दूरी करती हैं तब भी घर के भीतर सामाजिक पुनरुत्पादन के एक बड़े हिस्से की ज़िम्मेदारी उन्हीं के कंधों पर होती है। उन्हें, वेतन-सहित और वेतन-रहित, दोनों तरह के कामों का 'दोहरा बोझ' उठाना पड़ता है। इसकी वजह से महिलाएं श्रम बाजार में अपनी पूरी क्षमता के साथ हिस्सा नहीं ले पाती हैं।

नौकरीपेशा की पहचान

मृणालिनी झा

प्रस्तावना

हमें कैसे लगता है कि एक व्यक्ति कार्यरत है। क्या लोग तभी कार्यरत होते हैं जब वे रोजाना काम पर जाते हैं? क्या घर में रहकर नौकरी की जा सकती है? यदि कोई व्यक्ति सप्ताह में केवल 1 दिन काम करता है तो क्या वह नौकरीपेशा हो सकता है?

आइए 120 लोगों वाली अर्थव्यवस्था का उदाहरण लेते हुए शुरुआत करें। इन 120 लोगों में से 20 लोग 15 साल से कम उम्र के हैं। शेष 100 लोग कार्यशील आयु वर्ग के हैं – >= 15 वर्ष। इन 100 में से 40 लोग कार्यरत हैं अर्थात उनके पास नौकरी है। 40 लोग बेरोजगार हैं जिनके पास नौकरी नहीं है लेकिन वह काम करने के इच्छुक हैं और/ या सक्रिय रूप से नौकरी की तलाश में हैं, और जबकि शेष 20 लोग भी बेरोजगार हैं, वह काम करने को तैयार नहीं है और नौकरी की तलाश भी नहीं कर रहे हैं। इन अंतिम 20 लोगों को श्रम शक्ति से बाहर कहा जाता है। अतः श्रमबल में कामकाजी आयु वर्ग के वे सभी लोग शामिल हैं जो यह तो कार्यरत हैं या बेरोजगार हैं।

टर्म।	परिभाषा
कार्य आयु समूह	**> = 15 वर्ष**
रोजगार	**कार्य आयु वर्ग में नौकरी करना**
बेरोजगार	**नौकरी नहीं है, लेकिन काम करने को तैयार है और/ या सक्रिय रुप से कामकाजी आयु वर्ग में काम की तलाश है।**
श्रम बल	**कार्यरत + बेरोजगार**
श्रम बल से बाहर	**नौकरी न होना, और काम करने की भावना न होना, और कामकाजी आयु वर्ग में काम की तलाश ना होना।**

श्रम बल भागीदारी दर (एलएफपीआर) = श्रम बल/ कार्यशील आयु जनसंख्या

कार्यबल भागीदारी दर (डब्ल्यू पी आर) = कार्यरत/ श्रम बल

बेरोजगारी दर (यू आर) = बेरोजगार /कार्यशील आयु जनसंख्या

कार्यरत कौन है

हम रोजगार के बारे में कई अलग-अलग तरीकों से सोच सकते हैं और इसके परिणामस्वरूप रोजगार की कई परिभाषाएं मौजूद हैं। सबसे व्यापक परिभाषा वेतनभोगी रोजगार और अवैतनिक रोजगार की हो सकती है। सशुल्क रोजगार की श्रेणी के भीतर संदर्भ अवधि के आधार पर रोजगार की प्रकृति की पहचान करने के लिए कई तरीके हैं। ध्यान दें, कि यह कार्यस्थल की परवाह किए बिना है।

मापदंड।	निहितार्थ
अधिकांश समय	**पिछले 1 साल में कम से कम 6 महीने काम किया**
मासिक	**पिछले 1 साल में कम से कम 1 महीना कार्य किया**
साप्ताहिक	**पिछले 1 सप्ताह में कम से कम 1 घंटा कार्य किया**
दैनिक	**साक्षात्कार की दिनांक तक कम से कम एक कार्य किया**

नौकरीपेशा व्यक्तियों को मोटे तौर पर तीन समूहों में वर्गीकृत किया जाता है–

1 वेतनभोगी कर्मचारी
2 दैनिक मजदूर/आकस्मिक कर्मचारी
3 स्वरोजगार कर्मचारी

माफ की त्रुटियां

सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त जानकारी उस तरीके के प्रति संवेदनशील होती है जिसमें प्रश्न तैयार किए जाते हैं और उत्तरदाता जो उनका उत्तर देना चाहता है। यह अर्थव्यवस्था में महिला रोजगार को मापने के दौरान समस्याएं पैदा करने के लिए प्रलेखित किया गया है।

NOTES FROM ORGANIZERS: SCHOOL FOR DEMOCRACY

Aruna Roy and Satish Deshpande, with the SFD Collective

This kind of course is more important than ever because the current generation of activists was born in the post-Reagan-Thatcher era already dominated by a neoliberal worldview. They have only known a world without alternatives – with no Soviet Union and a market-facing China, where development economics is a marginalised ghetto, where "subsidy" is a dirty word but bailouts are "necessary course-corrections".

Economics and statistics are among the most effective tools used by the powerful to mystify reality and silence the people on the margins, denying them the basic human right to live with dignity. Justifications of inequality are dressed up in economic arguments and presented as axiomatic truths, when they are no more than distorted perceptions of reality seen through an ideological lens. Economics is as dependent on interpretation as any other social science. But in the battle for supremacy in policy and planning, economics claims victory by posing as an axiomatic science.

Activists fighting for greater equality, and for the fundamental demands for livelihood, food, education and health, need to be armed with tools for exposing spurious arguments, and offering persuasive alternative descriptions of reality to the public reinforced with counter statistics and economic analyses. Activists must be able to see through fake fiscal orthodoxies and to recognise the disguised forms of economic plunder embedded within power structures.

The dominant ideologies have succeeded in establishing the belief that the market economy is like a force of nature beyond human control. Courses like this are vitally necessary today to revive a grounded understanding of the economy that enables us in our efforts to make the democracy defined by the preamble to the Indian constitution a reality.

महंगाई (मुद्रास्फीति)

दावा शेरपा

मुद्रास्फीति (इन्फ्लेशन), या जिसे आम भाषा में महंगाई कहा जाता है, उसका अर्थ है अर्थव्यवस्था में जिन वस्तुओं और सेवाओं का लेन-देन होता है, उनकी कीमतों में निरंतर बढ़ोत्तरी। मुद्रास्फीति दर बताती है कि किसी तय अवधि के दौरान वस्तुएं और सेवाएं कितनी महंगी या सस्ती हुई हैं। मुद्रास्फीति का अर्थ है सामान्य मूल्य स्तर में वृद्धि जो मुद्रा/पैसे की खरीद-शक्ति के कम होने का संकेत देती है (महंगाई बढ़ने पर उसी पैसे में अब कम वस्तुएं/सेवाएं खरीदी जा सकती है)। अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति दर जीतनी ज़्यादा होगी, उपभोक्ताओं/नागरिकों द्वारा गुज़र-बसर के लिए किया जाने वाला खर्च उतना ही बढ़ेगा। जब मुद्रास्फीति दर बेलगाम हो जाती है तो उसे अति मुद्रास्फीति (हाइपर-इन्फ्लेशन) कहा जाता है। इस स्थिति में मुद्रा/पैसे की स्थिरता पर लोगों का विश्वास उठ जाता है और वे मुद्रा/पैसे का इस्तेमाल करना बंद कर देते हैं।

महंगाई का समाज के अलग-अलग वर्गों (आर्थिक समूहों) पर अलग-अलग प्रभाव होता है। अगर महंगाई बहुत ज़्यादा हो तो इससे तय-आमदनी वाले (पेंशन-भोगी, बैंक के जमाकर्ता, सरकारी कर्मचारी) और आम मज़दूर प्रभावित होते हैं, क्योंकि बढ़ती महंगाई की वजह से उन्हें मिलने वाले वेतन/आमदनी की खरीद-शक्ति तेज़ी से घटने लगती है। संगठित क्षेत्र के मज़दूर अपने संगठनों के ज़रिए मोलभाव करके अपनी मज़दूरी बढ़वा कर महंगाई से हुए नुकसान की भरपाई कर सकते हैं लेकिन अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने वाले ज़्यादातर असंगठित मज़दूरों को महंगाई का नुकसान भुगतना पड़ता है, क्योंकि वे अधिक वेतन के लिए मोलभाव करने की स्थिति में नहीं होते हैं। संपत्ति-धारी वर्ग, जैसे उद्योगपति, व्यापारी, रियल एस्टेट वाले और सट्टेबाज़ों के लिए महंगाई का मतलब होता है ज़्यादा मुनाफा और ज़्यादा आमदनी। इस तरह, महंगाई संपत्ति-धारी वर्ग और मेहनतकश वर्ग के बीच की गैर-बराबरी को और ज़्यादा बढ़ाती है। लेकिन, बढ़ती महंगाई से कर्जदारों/उधार लेने वालों पर क़र्ज़ का बोझ हलका होता है, क्योंकि वे क़र्ज़ की भरपाई जिस पैसे से करते हैं उसकी खरीद-शक्ति उधार लिए गए पैसे से कम होती है। इसी तरह, लेनदारों/उधार देने वालों को महंगाई से नुकसान होता है क्योंकि उन्हें वापस मिलने वाले पैसे की खरीद-शक्ति घट चुकी होती है।

बढ़ती महंगाई की वजह से निर्यात की जाने वाली घरेलू वस्तुएं महंगी हो जाती हैं, जियकी वजह से वदेश में उनकी मांग घट जाती है।

हालांकि, बहुत ज़्यादा महंगाई अर्थव्यवस्था के लिए अच्छी नहीं मानी जाती, लेकिन कीमतों में लगातार गिरावट भी अर्थव्यवस्था के लिए लाभदायक नहीं है। जब वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में लगातार गिरावट होती है तो उसे अपस्फीति (डिफ्लेशन) कहा जाता है।

महंगाई/मुद्रास्फीति के पीछे निम्नलिखित कारण हो सकते हैं:

मांग-जन्य मुद्रास्फीति/महंगाई:

समग्र मांग (या कुल खर्च) में बढ़ोत्तरी की वजह से होने वाली मुद्रास्फीति/महंगाई को मांग-जन्य मुद्रास्फीति/महंगाई कहा जाता है। यानी, जब अर्थव्यवस्था में होने वाले कुल खर्च के बढ़ने पर समग्र मांग में तो बढ़ोत्तरी होती है, लेकिन उत्पादन में उस हद तक इज़ाफ़ा नहीं हो पाता है तो मांग-जन्य महंगाई देखी जाती है। पूरी अर्थव्यवस्था के स्तर पर मांग में इस तरह की व्यापक बढ़ोत्तरी सरकारी खर्च में किए गए इज़ाफ़े की वजह से हो सकती है। अगर सरकारी खर्च सरकारी आमदनी से ज़्यादा हो तो इस अंतर को पूरा करने के लिए सरकार या तो बॉन्ड (ऋणपत्र) के माध्यम से जनता से उधार लेती है या अतिरिक्त मुद्रा/पैसे छापती है।

लागत-जन्य मुद्रास्फीति/महंगाई:

उत्पादन लागतों में बढ़ोत्तरी होने की वजह से भी महंगाई बढ़ सकती है और इसे लागत-जन्य मुद्रास्फीति/महंगाई या आपूर्ति-जन्य मुद्रास्फीति/महंगाई कहा जाता है। जैसे, भारत में पिछले कुछ सालों में पेट्रोल और डीज़ल की बढ़ती कीमतों की वजह से ज़्यादातर वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में बढ़ोत्तरी देखी गई है, क्योंकि ज़्यादातर उत्पादन प्रक्रियाओं में पेट्रोल और डीज़ल का व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाता है।

तो जब इस तरह की महत्वपूर्ण वस्तुओं की कीमतों में उछाल आता है तो कंपनियां अपना मुनाफा बनाए रखने के लिए अपने उत्पादों के दाम बढ़ा देती हैं। ख़राब मौसम और सूखे की वजह से कृषि उत्पादन में गिरावट आती है, जिसकी वजह से कृषि उत्पादों के दाम बढ़ने लगते हैं, जो कुल मुद्रास्फीति/महंगाई को बढ़ाता है। ज़रूरी वस्तुओं की जमाखोरी, करों में वृद्धि, मज़दूरी दर में बढ़ोत्तरी, कच्चे माल की लगत में इज़ाफ़ा, यह सभी लागत-जन्य मुद्रास्फीति/महंगाई के कारण हैं।

अपेक्षाएं:

अगर लागत-जन्य और मांग-जन्य महंगाई के कारण मौजूद न भी हों तो भी आने वाले समय में महंगाई बढ़ने की सिर्फ अपेक्षा ही वास्तव में महंगाई के बढ़ने का कारण बन सकती है। अगर मज़दूरों को लगता है कि महंगाई बढ़ने वाली है तो वे ज़्यादा मज़दूरी की मांग कर सकते हैं जिसके कारण कुछ समय बाद महंगाई बढ़ने लगेगी।

मुद्रावादी अर्थशास्त्र (मॉनेटारिस्म) में विश्वास रखने वालों के अनुसार, महंगाई का कारण केंद्रीय बैंक द्वारा मुद्रा/पैसे की छपाई होती है। इसलिए, महंगाई पर काबू पाने के लिए सरकार (केंद्रीय बैंक) को मुद्रा आपूर्ति (मनी सप्लाई) को घटाना चाहिए। लेकिन यह तभी काम करता है जब कंपनियां अपने कारखानों/मशीनों का उनकी पूरी क्षमता पर इस्तेमाल कर रही हो और मौजूदा मज़दूरी दर पर काम करने की इच्छा रखने वाले सभी मज़दूरों के पास रोज़गार हो (यानी अर्थव्यवस्था पूर्ण रोज़गार की स्थिति में हो)।

नव-कीन्सवादी और मार्क्सवादी विचारधारा के अनुसार, महंगाई का कारण, उत्पाद के मूल्य के लिए पूंजीपतियों और मेहनतकश वर्ग के बीच में होने वाला वर्ग संघर्ष है। जब पूंजीपतियों और मज़दूरों द्वारा किए गए दावे, कुल उत्पाद से ज़्यादा होते हैं तो यह महंगाई को जन्म देता है। इसलिए, महंगाई सिर्फ एक तकनीकी मुद्दा नहीं है, बल्कि पूंजीवाद के तहत दो प्रतिस्पर्धी आर्थिक वर्गों के बीच में होने वाली राजनीतिक टकराव का नतीजा है।

महंगाई को काबू में रखने और तेज़ गति से आर्थिक विकास सुनिश्चित करने की ज़िम्मेदारी देश के केंद्रीय बैंक (भारत में भारतीय रिज़र्व बैंक) के कंधों पर होती है। कई सरकारें और केंद्रीय बैंक सिर्फ महंगाई दर को स्थिर और निचले स्तर पर बनाए रखने पर ध्यान देने की नीति अपनाते हैं, जिसे मुद्रास्फीति लक्ष्य की नीति कहा जाता है। केंद्रीय बैंक महंगाई पर काबू पाने के लिए आमतौर पर ब्याज दर को बढ़ाते हैं और इसके ज़रिए उपभोक्ताओं और कंपनियों को कुल खर्च बढ़ाने से हतोत्साहित करते हैं। ब्याज दर में होने वाली बढ़ोत्तरी, उपभोक्ताओं को खर्च करने से और कंपनियों को निवेश (जैसे, नई मशीनों, कारखानों, इमारतों, इत्यादि में) करने से हतोत्साहित करती है।

इस तरह से कुल खर्च या कुल मांग में आने वाली गिरावट की वजह से अर्थव्यवस्था में कीमतों के स्तर में गिरावट आती है, जो महंगाई दर को कम करता है। केंद्रीय बैंक की इस नीति के कारण कुल उत्पादन और आर्थिक गतिविधियों में भी गिरावट आती है, जो बेरोज़गारी की समस्या को जन्म देता है। अगर महंगाई की वजह लागतों में आई बढ़ोत्तरी है (जैसे पेट्रोल या डीज़ल की कीमत में इज़ाफ़ा या मानसून में बारिश न होने, इत्यादि) तो इस महंगाई को काबू में लाने के लिए केंद्रीय बैंक द्वारा कुल खर्च और मांग को घटाने की नीति बेअसर होती है।

व्यापक-आर्थिक नीति के बुनियादी विचार (मैक्रोइकॉनॉमिक पॉलिसी):

दावा शेरपा

व्यापक अर्थशास्त्र (समष्टि अर्थशास्त्र या मैक्रोइकॉनॉमिक्स), अर्थशास्त्र की एक बहुत ही रोचक और नीति के नज़रिए से बहुत महत्व रखने वाली शाखा है। व्यापक-आर्थिक नीति (कर, खर्च, सब्सिडी, हस्तांतरण, इत्यादि) हर आम आदमी के जीवन और आजीविका को प्रभावित करती है। तो इस सत्र का बुनियादी उद्देश्य कुछ आम और प्रचलित ('विशेषज्ञों', आर्थिक पत्रकारों, इत्यादि के बीच प्रचलित) गलत धारणाओं को दूर करना और व्यापक-अर्थव्यवस्था से जुड़ी कुछ महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं को समझने और उनका विश्लेषण कर पाने के लिए एक बुनियादी सैद्धांतिक ढांचा प्रस्तुत करना है। हम तीन बुनियादी व्यापक-आर्थिक विरोधाभासों (कंजूसी का विरोधभास-कीन्स, लागत का विरोधाभास-कलेकि और शांति का विरोधाभास-मिन्स्की) पर चर्चा करेंगे, और इसके ज़रिए व्यापक-आर्थिक तर्कों की खूबसूरती और महत्व, और आम व्यक्ति के जीवन में इनकी प्रासंगिकता को रेखांकित करेंगे।

दूसरे हिस्से में, वित्त नीति (फिस्कल पॉलिसी) के कुछ बुनियादी विचारों पर चर्चा की जाएगी। तेज़ गति से आर्थिक विकास और अर्थव्यवस्था में आमदनी के ज़्यादा न्यायपूर्ण वितरण के उद्देश्यों को हासिल करने के लिए करों और सरकारी खर्च निर्धारित करने की नीति को वित्त नीति कहा जाता है। आमतौर पर, यह नीति हर साल वित्त मंत्रालय द्वारा निर्धारित की जाती है।

कीन्सवादी आर्थिक विचारधारा के अनुसार, सरकार द्वारा खर्च में की गई बढ़ोत्तरी (जैसे नई सड़कों, ऊर्जा संयंत्रों, रक्षा बजट, मनरेगा, इत्यादि पर) समग्र मांग को बढ़ाती है, जिससे आगे कुल उत्पाद और रोज़गार में बढ़ोत्तरी होती है। इसका कारण काफी सीधा सा है। सरकारी खर्च के बढ़ने से, मज़दूरों की आमदनी भी बढ़ती है, जिसकी वजह से कंपनियों की बिक्री और मुनाफे में बढ़ोत्तरी होती है।

क्योंकि मज़दूर खुद उपभोक्ता भी होते हैं, इसलिए मज़दूरों की आमदनी में बढ़ोत्तरी का मतलब उपभोक्ताओं की आमदनी में बढ़ोत्तरी होता है, और इसकी वजह से बाजार में कंपनियों के माल की बिक्री में इज़ाफ़ा होता है और उनका मुनाफा बढ़ जाता है। बढ़ती बिक्री और मुनाफे के चलते, कंपनियों को ज़्यादा कर्मचारियों को काम पर रखना पड़ता है और इस तरह अर्थव्यवस्था का कुल उत्पादन भी बढ़ता है।

जब सरकार कर घटाती है या उपभोक्ताओं के खातों में पैसे हस्तांतरित (ट्रांसफर) करती है (जैसे बेरोज़गारी भत्ता या किसनों या गरीब परिवारों को नकद हस्तांतरण, इत्यादि) तो भी अर्थव्यवस्था पर इसी तरह का प्रभाव देखा जा सकता है। तो सरकारी खर्च में की जाने वाली बढ़ोत्तरी से आमदनी बढ़ती है, रोज़गार बढ़ता है और अर्थव्यवस्था का कुल उत्पाद भी बढ़ता है। अगर सरकार अपना खर्च घटाती है तो अर्थव्यवस्था पर इसका ठीक उल्टा असर देखा जाएगा। सरकारी खर्च और समग्र मांग को बढ़ाने (घटाने) वाली वित्त नीति को विस्तारवादी (संकुचनकारी) वित्त नीति कहा जाता है। संकुचनकारी वित्त नीति को सरकारी खजाने की स्थिति मजबूत करने या मितव्ययिता (संभल के खर्च करने) की नीति भी कहा जाता है।

अगर अर्थव्यवस्था पहले से ही अपनी अधिकतम क्षमता पर हो (या पूर्ण रोज़गार की स्थिति में हो) तो सरकारी खर्च बढ़ाने से कुल उत्पाद और रोज़गार नहीं बढ़ेगा, क्योंकि उत्पादन को अधिकतम क्षमता से आगे बढ़ाना संभव नहीं है, इसलिए इस स्थिति में सरकारी खर्च बढ़ाए जाने से सिर्फ कुल मांग बढ़ेगी, जिसके चलते वस्तुओं और सेवाओं के दाम बढ़ेंगे, यानी इससे महंगाई बढ़ेगी। तो, जब अर्थव्यवस्था पहले से ही अपनी अधिकतम क्षमता पर हो तो सरकारी खर्च बढ़ाए जाने पर, उत्पाद या रोज़गार बढ़ने के बजाय महंगाई दर में बढ़ोत्तरी होती है। वैश्विक आर्थिक निवेशक अक्सर इस तर्क का सहारा लेते हुए सरकारी खर्च को बढ़ाए जाने का विरोध करते हैं, क्योंकि महंगाई विभिन्न प्रकार की वित्तीय संपत्तियों (शेयर, बॉन्ड (ऋणपत्र), जमा खाता, डेरीवेटिव, इत्यादि) से मिलने वाली आमदनी के मूल्य को घटाती है।

करों और वित्तीय हस्तांतरण के माध्यम से वित्त नीति का उपयोग विभिन्न आर्थिक वर्गों के बीच आय के पुनर्वितरण करने और आर्थिक समानता को बढ़ावा देने के लिए भी किया जाता है। आमतौर पर, सरकार अमीर तबकों के लिए ऊंची कर दर तय करती है और वित्तीय हस्तांतरण के ज़रिए गरीब और आर्थिक रूप से कमज़ोर तबकों की आमदनी को बढ़ाने की कोशिश करती है। बढ़ती आमदनी और संपत्ति के स्तर के साथ-साथ प्रत्यक्ष कर की दरें भी बढ़नी चाहिए, और एक सीमा के नीचे की आमदनी वालों को प्रत्यक्ष करों के भुगतान से छूट दी जाती है। लेकिन, अप्रत्यक्ष करों (जैसे जीएसटी, पेट्रोल और डीज़ल पर

लगाए गए कर, इत्यादि) का भुगतान सभी वर्ग के सदस्य करते हैं और अगर इन करों का आमदनी में अनुपात देखा जाए तो निचले आर्थिक वर्गों पर अप्रत्यक्ष करों का भार बाकी वर्गों के मुकाबले कहीं ज़्यादा होता है। सरकार गरीब तबकों, किसानों और आर्थिक रूप से कमज़ोर समूहों को सब्सिडी भी देती है। कर, सब्सिडी और हस्तांतरण से जुड़ी इन नीतियों को आमदनी की गैर-बराबरी को कम करने और आर्थिक समानता को बढ़ावा देने के नज़रिए से तय किया जाता है।

क्योंकि विस्तारवादी वित्त नीति के तहत अर्थव्यवस्था में कुल उत्पाद और रोज़गार बढ़ता है, इसलिए इसके ज़रिए मेहनतकश वर्ग की अपनी मज़दूरी के लिए पूंजीपति वर्ग के साथ मोलभाव कर पाने की क्षमता भी बढ़ती है। बेरोज़गारी घटने की वजह से मोलभाव कर पाने की क्षमता में होने वाली इस बढ़ोत्तरी की वजह से मज़दूर ज़्यादा मज़दूरी की मांग कर सकते हैं, जिससे कंपनियों की लागत बढ़ सकती है। अर्थव्यवस्था में रोज़गार के मौकों के बढ़ने और बेरोज़गारी के घटने पर काम के दौरान अनुशासनहीनता बढ़ सकती है और मज़दूरों पर पूंजीपतियों के नियंत्रण को चोट पहुंच सकती है। इसके अलावा, अगर सरकार विस्तारवादी वित्त नीति के ज़रिए अर्थव्यवस्था पर अपना नियंत्रण स्थापित करना शुरू कर दे तो वो उत्पादन प्रक्रिया में पूंजीपति वर्ग का स्थान ले सकती है और धीरे-धीरे पूंजीपति वर्ग की भूमिका ही ख़त्म कर सकती है। इसलिए, पूंजीपति वर्ग, ऐसी किसी भी विस्तारवादी वित्त नीति का विरोध करता है जो मज़दूर वर्ग के हित में हो।

भारतीय सरकार की वित्त नीति में मौजूद इन विरोधाभासों को केंद्र सरकार के बजट दस्तावेज़ों में भी देखा जा सकता है। हालांकि, विस्तारवादी वित्त नीति (स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे सामाजिक क्षेत्रों और मनरेगा जैसी रोज़गार पैदा करने वाली योजनाओं के बजट में वृद्धि), आर्थिक गतिविधियों और रोज़गार को बढ़ावा देकर पूरी अर्थव्यवस्था को फायदा पहुंचाने की क्षमता रखती है, लेकिन इस तरह की वित्त नीति का पूंजीपति वर्ग द्वारा कड़ा विरोध किया जाता है, खासतौर पर, भारत में नव-उदारवाद के उभार (1991-) के बाद के समय में। सामाजिक क्षेत्रों के बजट में कटौती, कॉर्पोरेट कंपनियों द्वारा दिए जाने वाले करों में छूट, जीएसटी और पेट्रोल/डीजल पर लगाए जाने वाले उत्पाद शुल्क (एक्साइज ड्यूटी) जैसे अप्रत्यक्ष करों में बढ़ोत्तरी के हाल में देखे जा रहे रुझान, केंद्र सरकार के बजट पर पूंजीवादी वर्ग के बढ़ते प्रभाव की ओर इशारा करते हैं।

मनरेगा और श्रम बाज़ार

आनंद श्रीवास्तव

आपको क्या लगता है, मनरेगा योजना शुरू करने के पीछे मुख्य उद्देश्य क्या था?
नीचे एक या उससे अधिक उद्देश्यों की सूची बनाइए:

मनरेगा के शुरुआती दौर में, इसका प्रमुख उद्देश्य स्थानीय स्तर पर रोज़गार उपलब्ध कराना था ताकि मौसमी उतार-चढ़ाव और अन्य कारणों से रोज़गार की उपलब्धता में होने वाली गिरावट से सुरक्षा दी जा सके। मनरेगा ने इस भूमिका को बखूबी निभाया (जैसा कि हमने कोविड लॉकडाउन के समय देखा)। हालांकि कुल ग्रामीण रोज़गार में, मनरेगा के तहत दिए जाने वाले रोज़गार का अनुपात बहुत ज़्यादा नहीं था, लेकिन इसके बावजूद मनरेगा के ग्रामीण श्रम बाज़ारों पर कुछ अनअपेक्षित प्रभाव भी देखे गए।
कई अध्ययनों ने लगातार इस निष्कर्ष की पुष्टि की है कि मनरेगा की वजह से ग्रामीण इलाकों में दी जाने वाली देहाड़ी/मज़दूरी में बढ़ोत्तरी हुई है। आपको क्या लगता है, ऐसा क्यों हुआ होगा?
एक या उससे ज़्यादा कारणों की नीचे सूचि बनाइए:

मनरेगा की वजह से ग्रामीण इलाकों में मिलने वाली मज़दूरी में होने वाली यह वृद्धि हमें ग्रामीण श्रम बाज़ारों को समझने में मदद करती है। लेकिन उससे पहले हमें कुछ तकनीकी शब्दों को समझने की ज़रुरत है:

प्रतिस्पर्धी बाज़ार: प्रतिस्पर्धी बाज़ार ऐसे बाज़ार होते हैं जहां न तो खरीदार और न ही विक्रेता (बेचनेवाला) ही अपनी मर्ज़ी से दाम तय कर सकते हैं। जैसे, अगर हम बाज़ार में आलू खरीदने जाएं और बाजार में इनका दाम 30 रुपए प्रति किलो है तो हमें इसी दाम पर आलू खरीदने पड़ेंगे। अगर हम किसी दुकानदार से 25 रुपए प्रति किलो के दाम पर आलू बेचने को कहें तो वे कम दाम पर आलू बेचने के बजाय दूसरे खरीददार का इंतज़ार करना पसंद करेंगे। इसी तरह, अगर दुकानदार हम से 35 रुपए प्रति किलो मांगता है तो हम अगली दुकान पर जाना पसंद करेंगे। ऐसा इसलिए है क्योंकि इस बाज़ार में पर्याप्त संख्या में खरीदार और विक्रेता मौजूद हैं।

कुछ अर्थशास्त्री श्रम बाज़ार (जहां नियोक्ता/मालिक श्रम खरीदता है और मज़दूर श्रम बेचता है) को पूर्ण रूप से प्रतिस्पर्धी बाज़ार के रूप में देखते हैं। क्या आपको यह सही लगता है? क्यों या क्यों नहीं? अपने उत्तर को नीचे दर्ज करें:

उत्तर:

उत्पादकता: एक मज़दूर द्वारा उत्पादन प्रक्रिया के दौरान पैदा किए गए मूल्य को उसकी उत्पादकता कहा जाता है। उदाहरण के तौर पर, एक ऐसे कारखाने की कल्पना करें जहां खोखे तैयार किए जाते हैं। अगर एक मज़दूर एक घंटे में 20 खोखे तैयार करता है और हर खोखे की कीमत 10 रुपए है (कच्चे माल की लागत और अन्य लागत को घटाने के बाद) तो इस मज़दूर की उत्पादकता 200 रूपए प्रति घंटा होगी।
अगर श्रम बाज़ार प्रतिस्पर्धी है तो मज़दूर को मज़दूरी के तौर पर उसकी उत्पादकता का मूल्य दिया जाएगा, क्योंकि इससे कम मज़दूरी दिए जाने पर किसी और मालिक को इन्हें ज़्यादा मज़दूरी पर काम देने में फायदा दिखाई देगा। जैसे, अगर मज़दूर को 100 रुपए दिए जाते हैं तो दूसरा मालिक सोचेगा कि अगर वे इस मज़दूर को 150 रूपए देकर काम पर रखता है तो उसे अब भी 50 रूपए का फायदा ही होगा, और इस तरह मज़दूरी तब तक बढ़ती रहेगी जब तक यह उत्पादकता के बहुत करीब न पहुंच जाए।
मनरेगा का उदाहरण हमें बताता है कि मनरेगा के पहले ग्रामीण श्रम बाजार प्रतिस्पर्धी नहीं थे क्योंकि मनरेगा के शुरू होने से, उत्पादकता में बिना किसी बदलाव के ही मज़दूरी में बढ़ोत्तरी देखी गई। यह बहुत महत्व रखता है क्योंकि अगर श्रम बाजार प्रतिस्पर्धी हैं और दी जा रही मज़दूरी उत्पादकता के बराबर है तो मज़दूरी के बढ़ने की कोई वजह नहीं है, सिवाय उस स्थिति में जब कुछ लोगों से उनका रोज़गार छिन जाए। मनरेगा के मामले में, क्योंकि श्रम बाज़ार प्रतिस्पर्धी नहीं थे, इसलिए मज़दूरी में उछाल देखा गया।

आपके अनुसार, ग्रामीण इलाकों में मज़दूरी के बढ़ने का नीचे दी गई प्रक्रियाओं पर क्या प्रभाव होगा (अगर कोई प्रभाव हो तो):

1. महंगाई/मुद्रास्फीति: घटेगी/बढ़ेगी/कोई असर नहीं
2. गांव के बाहर प्रवास/पलायन: घटेगा/बढ़ेगा/कोई असर नहीं
3. किसानों की आमदनी: घटेगी/बढ़ेगी/कोई असर नहीं

कुछ अर्थशास्त्रियों का मानना था कि मनरेगा की वजह से मज़दूरी में होने वाली इस बढ़ोत्तरी की वजह से खाद्य सामग्री की कीमतों में उछाल आएगा जिससे महंगाई बढ़ेगी। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। कुछ खाद्य सामग्रियों की कीमतों में उछाल ज़रूर देखा गया लेकिन इसका कारण अंतर्राष्ट्रीय कीमतों में देखी गई गर्मी थी।

तो, अगर मज़दूरी में बढ़ोत्तरी देखी जाए और खाद्य सामग्रियों की कीमतों में कोई इज़ाफ़ा न हो तो किसानों की आमदनी में कटौती देखी जाएगी। अध्ययनों में यह भी पाया गया है कि मनरेगा की वजह से छोटी अवधि के लिए होने वाले प्रवास में कमी आई है।
अब कुछ राज्य सरकारें, मनरेगा की ही तर्ज़ पर शहरी रोज़गार गारंटी योजनाएं लागू करने पर भी विचार कर रही हैं (राजस्थान और तमिलनाडु जैसे राज्यों में इस तरह के कार्यक्रमों की शुरुआत पहले ही हो चुकी है)।
इस तरह की योजनाओं की रूपरेखा तय करते समय इन मुख्य बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए:

- रोज़गार के लिए किस तरह का काम दिया जाएगा?
- मज़दूरी कितनी होगी?
- कौन रोज़गार पा सकेगा? (जैसे, क्या प्रवासी मज़दूरों को रोज़गार दिया जाना चाहिए?)

चलिए, दूसरे सवाल पर कुछ विचार करें - एक शहरी रोज़गार कार्यक्रम के तहत कितनी मज़दूरी दी जानी चाहिए?
नीचे दिए गए विकल्पों में से चुनें:

- उस काम के लिए बाज़ार में अभी दी जा रही मज़दूरी
- उस काम के लिए सरकार द्वारा तय की गई न्यूनतम मज़दूरी (ज़्यादातर मामलों में यह बाज़ार में दी जा रही मज़दूरी से ज़्यादा होगी)
- जीवन निर्वाह मज़दूरी, जो सभी तरह के कामों के लिए एक ही होगी (यानी, सफाईकर्मचारी और उसके मुकादम/सुपरवाइजर, दोनों को एक ही मज़दूरी दी जाएगी)

आपके द्वारा चुने गए विकल्प का नीचे दी गई प्रक्रियाओं पर क्या असर पड़ेगा?

अपने जवाबों को नीचे लिखिए:

- रोज़गार कार्यक्रम पर क्या असर पड़ेगा?
- बाज़ार में दी जाने वाली मज़दूरी पर क्या असर पड़ेगा?
- बाजार के ज़रिए मिलने वाले रोज़गार पर क्या असर पड़ेगा?

आमतौर पर, कार्यक्रम के तहत दी जाने वाली मज़दूरी जीतनी ज़्यादा होगी, रोज़गार की मांग भी उतनी ही ज़्यादा होगी। और इसके कारण, बाजार में दी जाने वाली मज़दूरी में भी बढ़ोत्तरी होगी। शायद बाज़ार में मिलने वाले रोज़गार पर इसका कुछ हद तक असर न हो, लेकिन एक सीमा के बाद छोटे व्यापारियों के लिए इस मज़दूरी का भुगतान कर पाना मुश्किल हो जाएगा (मज़दूरी उत्पादकता के स्तर से ऊपर चली जाएगी) और इसके चलते रोज़गार में गिरावट आने लगेगी।

बजट /आर्थिक नीतियाँ और संवैधानिक मूल्य

शंकर सिंह

हमारे देश की उद्देशिका के अनुसार हर व्यक्ति की गरिमा का ध्यान रखना चाहिए. निति-निर्देशक तत्व का अनुच्छेद 41-काम पाने, शिक्षा प्राप्त करने एवं विशेष स्थितियों में सहायता पाने के हक़ की बात करता है. इस अनुच्छेद के अनुसार, अपनी आर्थिक क्षमता एवं विकास की सीमाओं में रहकर राज्य (सरकार) लोगों के काम का अधिकार, शिक्षा का अधिकार एवं बेरोज़गारी, वृद्धावस्था, अपंगता तथा अन्य अनर्जित मांगों की स्थितियों में जन-सहायता के अधिकार को सुनिश्चित करने के लिये प्रभावी प्रावधान करेगा।
राष्ट्रीय लेखा संखायिकी (National Accounts Statistics) के एक अनुमान के अनुसार देश के 92% से अधिक लोग असंगठित क्षेत्र में काम करते हैं. असंगठित क्षेत्र का मतलब है कि आपकी कोई पक्की नौकरी नहीं है और आप जब काम करेंगे तभी पैसा मिलेगा. संगठित क्षेत्र में रिटायर होने की एक उम्र होती है जिसके बाद उन्हें पेंशन मिलती है. लेकिन एक बड़ा तबका जो असंगठित क्षेत्र में है उसकी न तो कोई रिटायरमेंट की कोई उम्र है और उसका एक उम्र के बाद काम करना भी मुश्किल हो जाता है. इस कारण यह तबका सरकार द्वारा दी जा रही सामाजिक सुरक्षा पेंशन पर निर्भर है. इसमें वृद्धजनों के साथ-साथ विकलांग और एकल महीला (विधवा/परित्यक्ता) भी शामिल हैं.|
यह तबका ऐसा भी है जिसको अपनी आवाज़ उठाने के लिए कहीं जाना है तो भी उनके लिए यह चुनौती हो जाता है केंद्र सरकार ने 2006 से 2011 के बीच राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम के तहत सिर्फ गरीबी रेखा से नीचे (BPL) लाभार्थियों के लिए निम्न पेंशन स्कीम चालु की/बदली :

योजना	इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना	इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना	इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विकलांगता पेंशन योजना
पात्रता	बीपीएल परिवारों के 60 वर्ष या उससे अधिक आयु के महिला अथवा पुरुष	बीपीएल परिवारों की 40 वर्ष व उससे अधिक आयु की विधवा महिला	बीपीएल परिवारों के 18 वर्ष व उससे अधिक आयु के 80% या उससे अधिक निशक्तता वाले निशक्त व्यक्ति
प्रतिमाह देय वित्तीय लाभ	60 वर्ष या उससे अधिक किंतु 80 वर्ष से कम को ₹20080 वर्ष व अधिक को ₹500	40 वर्ष या उससे अधिक किंतु 60 वर्ष से कम को ₹30060 वर्ष या उससे अधिक को वृधावस्था पेंशन अनुसार	18 वर्ष या उससे अधिक किंतु 60 वर्ष से कम को ₹30060 वर्ष से अधिक को वृधावस्था पेंशन अनुसार

लोकसभा में फ़रवरी,2023 में जब संबधित मंत्री से संसद में निम्न सवाल पुछा जिसका निम्न जवाब मिला (अन्तारंकित प्रशन 892 - यह जानकारियां लोकसभा की वेबसाईट https://sansad.in/ पर अंग्रजी या हिंदी में देख सकते हैं) :

(क): राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (एनएसएपी) की इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना (आईजीएनओएपीएस) के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले (बीपीएल) परिवारों के 60 से 79 वर्ष आयु वर्ग के वृद्ध व्यक्तियों को 200/- रुपये प्रति माह की दर से मासिक पेंशन का भुगतान किया जा रहा है। 80 वर्ष और उससे अधिक आयु होने पर इन लाभार्थियों की पेंशन की राशि बढ़ाकर 500/- रुपये प्रति माह कर दी जाती है। वर्ष 2007 में वृद्धावस्था पेंशन योजना के तहत सहायता दर को 75 रुपये से बढ़ाकर 200 रुपये कर दिया गया। इसके अलावा, वर्ष 2011 में 80 वर्ष और उससे अधिक आयु के व्यक्तियों के लिए इसे संशोधित कर 500 रुपये कर दिया गया ।

(क) क्या सरकार को इस बात की जानकारी है कि राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (एनएसएपी) के अंतर्गत वृद्धावस्था पेंशन में केन्द्रीय योगदान 12 वर्षों से अधिक समय से 200 रुपये प्रति माह पर स्थिर है और यदि हां, तो इसके क्या कारण हैं;

(ख): 15वें वित्त आयोग की अवधि (2021-26) के लिए एनएसएपी को जारी रखने पर विचार करते समय, सरकार द्वारा योजना के तहत पात्रता मानदंड और सहायता की दर में संशोधन पर विचार किया गया। तथापि , सरकार ने एनएसएपी योजना को उसके वर्तमान स्वरूप में जारी रखने को अनुमोदित किया, इसलिए वर्तमान में, पेंशन राशि में वृद्धि का कोई प्रस्ताव विचाराधीन नहीं है। तथापि, राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को एनएसएपी के अंतर्गत केन्द्रीय सहायता के अतिरिक्त टॉप-अप प्रदान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। वर्तमान में, आईजीएनओएपीएस के तहत प्रति लाभार्थी 50 रुपये से 3000 रुपये प्रति माह तक की पूरक राशि दी जाती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृधावस्था पेंशन स्कीम में वर्षवार जारी किया गया पैसा (करोड़ में)

2014-15	2015-16	2016-17	2017-18	2018-19	2019-20	2020-21	2021-22
4180.98	5562.69	5900.92	6110.43	5775.83	6193.38	6152.61	5806.39

चर्चा : वर्ष 2016-17में आवंटन ज्यादा था या वर्ष 2021-22 में ?
अभ्यास : क्या आप लोक सभा की वेबसाईट पर जा का इस प्रशन के जवाब में ही यह भी देख सकते हैं की आपके राज्य को हर साल इस योजन में कितना पैसा मिला?
पेंशन परिषद का मकसद ऐसे मुद्दों को ही उठाना है. पेंशन परिषद ने दिल्ली में 2013 में पेंशन को सार्वभौमिक करने और इसकी राशि बढाने के लिए धरना किया जिसमें देश भर से लोग आये. इसका असर केंद्र सरकार पर तो नहीं हुआ लेकिन राजस्थान की सरकार ने इस मांग पर विचार किया और पेंशन को सार्वभौमिक बनाया. इसके साथ-साथ उन्होंने वृधावस्था पेंशन की उम्र कम की, 40% से अधिक विकलांगता पर पेंशन का प्रावधान किया और 20 साल से ज्यादा विधवा/एकल नारी को पेंशन में जोड़ा. इसका असर है कि जहाँ केंद्र सरकार उपर्युक्त राशि राजस्थान में करीब 12 लाख लाभार्थियों को ही दे रही है वहीँ राजस्थान के कुल पेशनधारी करीब 94 लाख हैं . इनको मिलने वाली राशि 500 से लेकर 1500 तक थी. वर्ष 2023-24 में इस राशि को बढ़ाकर कम से कम 1000 किया गया है और यह भी घोषणा की गयी है कि एक कानून लाया जाएगा जिससे हर साल यह पेंशन 15% बढ़ेगी . यह कानून बनता है तो यह जन आन्दोलनों की एक बड़ी जीत होगी क्योंकि यह मांग लम्बे समय से थी कि पेंशन न्यूनतम मजदूरी की आधी हो और उसे महंगाई से जोड़ा जाए.

हर हाथ को काम मिले, काम का पूरा दाम मिले.
बुढापे में आराम मिले, पेंशन और सम्मान मिले

एक तरफ तो यह तबका है और दूसरी तरफ सरकारी अधिकारी/कर्मचारी हैं जिनकी न सिर्फ तनख्वाह की राशि अच्छी है बल्कि पेंशन भी भरपूर है. हर साल महंगाई भत्ता दो बार बढ़ता है. इनको कई छुट्टियों की भी तख्वाह मिलती है जो असंगठित क्षेत्र में लगभग है ही नहीं. राजस्थान के बजट का उदहारण ले, तो सरकारी कर्मचारी की पेंशन और तनख्वाह और उन्हें देने के लिए गए क़र्ज़ के ब्याज से तो राज्य जितना टैक्स खपत करता है वो इन्ही में पूरा हो जाता है.

कर्मचारियों/अधिकारियों के वेतन-पेंशन				
कर्मचारी	वेतन			
	जब नौकरी चालू होती है	10 साल बाद	30 साल बाद	पेंशन
चतुर्थ श्रेणी	27,600	36,500	76,300	36,900
पटवारी	32,450	42,300	98,400	47,600
बाबू	32,450	47,580	1,03,400	50,500
ग्राम सेवक	33,540	43,500	90,200	45,000
अध्यापक 3rd ग्रेड	52,700	74,700	1,40,400	62,100
अध्यापक 2nd ग्रेड	59,000	82,500	1,62,900	78,700
स्कूल व्याख्याता	69,100	90,500	1,77,500	85,800
कॉलेज व्याख्याता	90,000	1,32,100	3,40,400	1,50,600
A En	87,500	1,14,700	2,30,000	2,21,600
RAS	87,500	1,28,400	2,88,200	1,40,000
IAS	87,500	1,34,300	3,51,000	1,55,250

राजस्थान के कर राजस्व का लेखा जोखा					
वर्ष 2020-21				वर्ष 2022-23	
कहाँ से आया	आय	कहाँ गया	खर्च	आएगा	जाएगा
GST से	20,754.87	वेतन	51,070.13	39500	66385
पंजीयन/स्टेम्प	5,297.27	पेंशन	22,439.62	8100	24439
आबकारी	9,853.00	क़र्ज़ का ब्याज़ चुकाया	25,201.81	15000	28838
बिक्री कर (VAT)	17,479.04			25000	
वाहन कर	4,368.17			7000	
अन्य कर	2,531.09			3693.67	
आय-व्यय योग (करोडो में)	60,283.44		98,711.56	98293.67	119662
कम पड़े वो जनता के माथे			38,428.12		21,368.33

असंगठित मजदूरों में एक बड़ी हिस्सेदारी निर्माण श्रमिकों की है. किसी भी भवन अन्यथा निर्माण जैसे सड़क, नहर, तालाब आदि के निर्माण के किसी भी हिस्से में काम करने वाले निर्माण श्रमिक है. इसमें से एक बड़ी संख्या प्रवासी श्रमिकों की है जो काम की तलाश में अपना जिला/राज्य छोड़कर दूसरी जगह जाते हैं.
केंद्र सरकार भवन एवं अन्य संनिर्माण अधिनियम. 1996 के तहत हर राज्य में एक कल्याण बोर्ड बना हुआ है. यह बोर्ड निर्माण पर टैक्स लगाकर, इन श्रमिकों के लिए कल्याणकारी योजनायें चलाता है .
लेकिन दिक्कत यह है कि असली निर्माण श्रमिकों को इस योजना की जानकारी बहुत कम है. चूँकि इसमें प्रवासी मजदूर ज्यादा हैं उस कारण भी रजिस्ट्रेशन में दिक्कत आती है. कुछ सामाजिक अंकेक्षण में यह भी पाया गया कि एजेंट/दलाल लाभ दिलवाने के नाम पर बहुत से ऐसे लोगों का पंजीकरण करवा देते हैं जो कभी निर्माण श्रमिक रहे ही नहीं. जिनका रजिस्ट्रेशन हो चुका है उनसे भी यह एजेंट योजन का लाभ दिलवाने के नाम पर दलाली लेते हैं. बजट के लिहाज से यह मनरेगा से भी बड़ी योजना बन चुकी है.

क्या आपको अपने राज्य के भवन एवं अन्य संनिर्माण श्रमिक कल्याण मंडल द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के बारे में पता है?
क्या आप पाने राज्य के निर्माण श्रमिकों की सूची देख सकते हैं?

"भवन और अन्य निर्माण श्रमिकों" के संबंध में पूछे गए दिनांक 13.02.2023 को उत्तर के लिए नियत लोक सभा अतारांकित प्रश्न संख्या 1722 के भाग (क) से (घ) के उत्तर में संदर्भित अनुबंध

पंजीकृत बीओसी श्रमिकों से संबंधित विवरण और राज्य/संघ राज्य क्षेत्र बीओसीडब्ल्यू कल्याण बोर्डों के उपकर विवरण

क्र.सं.	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र का नाम	पंजीकृत बीओसीडब्ल्यू श्रमिकों की संख्या [दिनांक 01.11.2022 तक]	संचित संचयी उपकर (करोड़ रुपये में) [दिनांक 01.11.2022 तक]	संचयी व्यय (करोड़ रुपये में) [दिनांक 01.11.2022 तक]
(क)	(ख)	(ग)	(घ)	(ङ)
1	आंध्र प्रदेश	1992337	2549.20	569.63
2	अरूणाचल प्रदेश	63671	485.85	480.16
3	असम	636683	2124.66	397.85
4	बिहार	2088756	2832.78	1444.76
5	छत्तीसगढ़	1758894	1785.07	1342.97
6	गोवा **	16060	314.25	14.35
7	गुजरात **	683000	2013.84	545.29
8	हरियाणा **	920054	3656.80	1622.75
9	हिमाचल प्रदेश	435197	1136.87	469.87
10	जम्मू और कश्मीर (लद्दाख सहित)	285029	1520.67	903.47
11	झारखंड	1313139	1118.44	564.60
12	कर्नाटक	3942711	9557.48	6049.22
13	केरल **	2045538	2740.95	4399.78
14	मध्य प्रदेश	1444257	5078.85	3975.72
15	महाराष्ट्र	1401693	14273.18	5864.43
16	मणिपुर	193213	312.23	244.00
17	मेघालय	87760	225.04	41.20
18	मिजोरम	68244	210.82	175.98
19	नागालैण्ड	33756	171.97	109.40
20	ओडिशा	3660419	3315.80	2808.93
21	पंजाब	639269	1929.53	1310.89
22	राजस्थान	2974011	3925.23	2164.21
23	सिक्किम**	38361	188.25	56.75
24	तमिलनाडु	2085256	5511.96	2098.47
25	तेलंगाना	1363443	3539.82	2192.24
26	त्रिपुरा	117218	281.83	64.26
27	उत्तर प्रदेश	15266278	8325.41	6366.64
28	उत्तराखंड	449128	998.72	569.03
29	पश्चिम बंगाल **	3197538	3712.29	1324.34
30	दिल्ली	1316385	3038.06	858.12
31	अंडमान और निकोबार	21544	126.45	29.22
32	चंडीगढ़	28888	167.38	28.66
33	दादरा और नागर हवेली	10667	75.93	8.46
34	दमन व दीव	14924	42.96	9.96
35	लक्षद्वीप	434	12.75	2.36
36	पांडिचेरी	38003	177.47	161.23
	कुल	50631758	87478.79	49269.20

*स्रोत: राज्य/संघ राज्य क्षेत्र बीओसीडब्ल्यू कल्याण बोर्डों से प्राप्त रिपोर्ट/डाटा के अनुसार
** दिनांक 01.07.2022 के अनुसार डाटा

वैसे तो भारत जन कल्याणकारी राज्य है लेकिन पिछले कुछ समय में हुए निर्णयों कुछ अलग ही बताते है. केंद्र सरकार ने इस वर्ष के बजट में मनरेगा का बजट घटाया, कोविड के समय से जो फ्री राशन मिल रहा था उसे ख़त्म कर दिया, महंगाई के अनुसार देखा जाए तो पेंशन का बजट भी कम किया, किसानों की सब्सिडी भी कम की है और बड़ी कंपनियों पर टैक्स कम किया है. इस नीतियों से आर्थिक समानता कम होने की बजाए बढती ही जा रही है.

NOTES FROM ORGANISERS: AZIM PREMJI UNIVERSITY

Arjun Jayadev (Director, School of Arts And Sciences)

Although the functioning of the economy is of widespread interest to most individuals in society, economics as a subject can often be difficult, unwelcoming and abstruse. The contrast between the urgent , real immediate concerns of economic life that affects everyone deeply and the dry, formal subject that is the staple of textbooks could not be sharper. Worse, economics as it is often taught, serves to act as a fetter on political imagination and action. Policy changes and orientations that appear to potentially make people's lives better are often argued to be a wooly-headed, unscientific or contravening the laws of economics.

But things are changing. Decades of neoliberalism have led to highly uneven outcomes for people and a general sense of drifting away from the world we want to see, as well as a disenchantment with the status quo. More people are willing to question the basic 'consensus' around the management of the economy. At the same time, modern economic research has meant that the subject itself is moving away from the standard nostrums of the past.

Activists and communities seeking to secure a better and more just life now have a bigger opening to push for these objectives now than in the past. But they still lack an understanding of the functioning of the economy.

This workshop accordingly is designed to address knowledge gaps, counter economic myths, introduce genuine debates and to empower activists to push for genuine change with the arsenal of strong economic understanding undergirding their efforts.

By the end we hope that participants are able to use what they learn to push for and implement progressive policy reforms in the short-term , and to generate meaningful new visions for the longer term around which movements can grow and prosper.

खरा अर्थशास्त्र क्या है

अमित बसोले

समाज के हर व्यक्ति का आर्थिक रूप से खुशहाल होना यह किसी भी न्यायसंगत सामाजिक ढांचे का अनिवार्य अंग है। जो संरचना इस लक्ष्य को पूरा करने में विफल होती है वह समर्थन की हक़दार नहीं। आर्थिक खुशहाली केवल नियमित रोज़गार तक ही सिमित नहीं है। इसमें और कई महत्वपूर्ण अंग शामिल हैं। जैसे सम्मानजनक काम जो व्यक्ति की सृजनात्मक ज़रूरतें भी पूरी कर सके, जो प्रकृति के संतुलन को सुधार न सके तो काम से कम और न बिगाड़े, और जिसके ज़रिये इतनी कमाई हो सके कि परिवार और दोस्तों-रिश्तेदारों के साथ निश्चिंत हो कर समय बिताया जा सके। सामाजिक स्तर पर आर्थिक खुशहाली आर्थिक न्याय का रूप लेती है- यानी आर्थिक अधिकारों का वास्तविक रूप लेना, और लिंग-जाती-धरम आधारित विषमताओं का ख़ात्मा। आर्थिक निति का उद्देश्य ऐसी अर्थव्यवस्था का निर्माण है जो इन मूल्य पर खरी उतरे। और ऐसी नीतियों की कल्पना करना, उन्हें गढ़ पाना, उस अर्थशास्त्र की पहचान है जो मानवता और प्रकृति के गिर्द घूमता है। यह है खरा अर्थशास्त्र।

सवाल यह उठता है कि ऐसी नीतियों का निर्माण कैसे होगा? और इससे भी पेचीदा सवाल, अगर नीतियों की कल्पना हो भी गयी तो उन पर अमल कैसे होगा? पहला सवाल अर्थशास्त्र और अर्थशास्त्रियों की सोच के दायरे में है दूसरा एक राजनैतिक प्रक्रिया है जिसमे अर्थशास्त्री अपनी भूमिका तो निभा सकते हैं लेकिन इस प्रक्रिया के बारे में उनके पास कोई विशेष ज्ञान नहीं है।पहले सवाल का अर्थशास्त्र के दायरे में होने का मतलब यह नहीं है की इस प्रक्रिया में किसी और की कोई भूमिका नहीं। इसके बिल्कुल विपरीत, समाज की, सामाजिक आंदोलनों और कार्यकर्ताओं की इसमें अगुआई होनी चाहिए। और इनके बताये हुए मूल्यों तथा लक्ष्यों की बिना पर अर्थशास्त्रियों को अपना काम करना चाइये। अर्थशास्त्री और समाज का रिश्ता किसी इंजीनियर और मशीन जैसा नहीं है और न ही डॉक्टर-मरीज़ जैसा है। खरा अर्थशास्त्री वह है जो अपने आप को समाज के ऊपर या परे नहीं बल्कि समाज का हिस्सा समझता है और अपने विशेष ज्ञान को समाज की सेवा में रखता है।

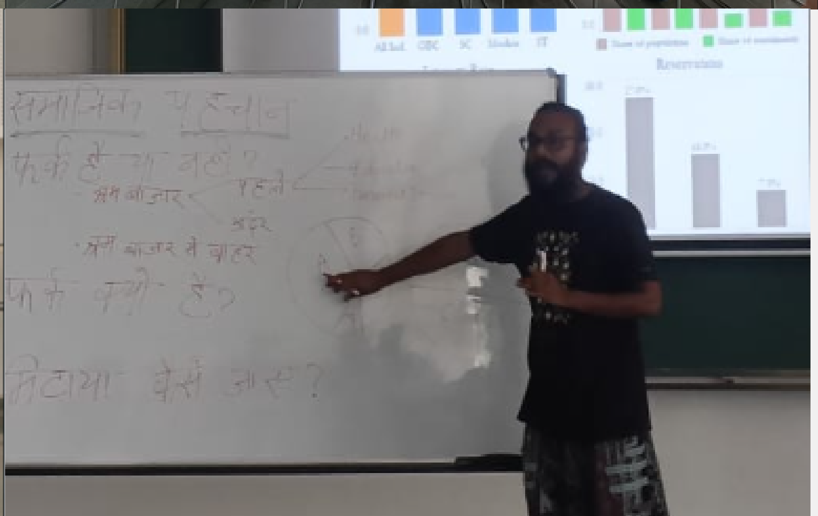
सामाजिक पहचान
फर्क है या नहीं?
फर्क क्यों है?
मिटाया कैसे जाए?